

सुसमाचार क्या है?

अति महत्वपूर्ण प्रश्न

आर.सी. स्प्रोल

सुसमाचार क्या है?

अति महत्वपूर्ण प्रश्नों की पुस्तिकाएँ निश्चित मसीही
सच्चाइयों के विषय में एक सहज परिचय प्रदान करती हैं।
इस बढ़ते हुए संग्रह में निम्न शीर्षक सम्मिलित हैं:

यीशु कौन है?

क्या मैं बाइबल पर भरोसा कर सकता हूँ?

क्या प्रार्थना बातों को बदलती है?

क्या मैं परमेश्वर की इच्छा को जान सकता हूँ?

मुझे इस संसार में कैसे जीना चाहिए?

नया जन्म होने का अर्थ क्या है?

क्या मुझे निश्चय हो सकता है कि मैं उद्धार पाया हुआ हूँ?

विश्वास क्या है?

मैं अपने दोषबोध के साथ क्या कर सकता हूँ?

लिएकता क्या है?

श्रृंखला की शेष पुस्तकों के लिए कृपया जाएँ:

<https://margsatyaajeevan.com>

अप्र

सुसमाचार क्या है?

आर.सी. स्प्रोल



Originally published in English under the title:

What Is the Gospel?

© 2013 by R.C. Sproul

Published by Ligonier Ministries

421 Ligonier Court, Sanford, FL 32771

Ligonier.org

Translated by permission. All rights reserved.

First Hindi Translation and Print 2025

This Hindi edition is issued in arrangement with Ligonier Ministries, USA.

Translated and published in India by 'Marg Satya Jeevan'
for distribution and sales worldwide.

*'Marg Satya Jeevan' is a brand of Hodalzo Services Pvt. Ltd. company which exists to
print, publish & distribute resources for the Church in India.*

Hindi ISBN: 978-81-969627-4-6 (eBook)

प्रथम हिन्दी अनुवाद एवं संस्करण 2025

‘सुसमाचार क्या है?’ पुस्तक का हिन्दी संस्करण लिग्रिपर मिनिस्ट्रीज़ के प्रायोजन से ‘मार्ग सत्य जीवन’ द्वारा

अनुवादित एवं प्रकाशित किया गया है।

अधिक संसाधनों के लिए मार्ग सत्य जीवन की वेबसाइट पर जाएँ:

<https://margsatyajeevan.com>

विषय सूची

एक	परमेश्वर का सुसमाचार.....	1
दो	उद्धार की सामर्थ्य	9
तीन	यीशु: एकमात्र उद्धारकर्ता	19
चार	यीशु परमेश्वर-मनुष्य	29
पाँच	सिद्ध बलिदान.....	39
छः	पुनरुत्थान और धर्मीकरण.....	51
सात	अभ्यारोपण.....	61
आठ	ख्रीष्ट की धार्मिकता	69
नौ	जीवन-परिवर्तनकारी सुसमाचार.....	77
दस	उद्धारक विश्वास	83
ग्यारह	ख्रीष्ट और धर्मसिद्धान्त	91
बारह	सुसमाचार की उद्धोषणा	99

अध्याय एक

परमेश्वर का सुसमाचार

The Gospel of God

सु समाचार क्या है? सम्भवतः, हमारे लिए उत्तर देने के लिए इससे अधिक महत्वपूर्ण कोई प्रश्न नहीं है, क्योंकि हम जो उत्तर देंगे वह हमारी अनन्त नियति (हमारे अनन्त काल) को निर्धारित करने में सहायक होगा। दुर्भाग्य से, सुसमाचार क्या है, इसके विषय में सुसमाचारवादी कहलाने वाले लोगों के मध्य आज बड़े स्तर पर अज्ञानता दिखाई देती है। इसकी विषय-वस्तु क्या है? शुभ समाचार क्या है, यह शुभ समाचार क्यों है, और यीशु ख्रीष्ट* के सुसमाचार पर विश्वास करने का क्या अर्थ है? हमारे लिए न केवल सुसमाचार की उत्पत्ति

* यद्यपि परम्परागत रीति से यूनानी शब्द ख्रिस्टोस को हिन्दी अनुवादों में 'मसीह' के रूप में अनुवाद किया गया है, इसके लिए 'ख्रीष्ट' शब्द अधिक उपयुक्त है। इसका कारण यह है कि 'मसीह' शब्द इब्रानी भाषा के *मशियाख* अर्थात् मसीहा शब्द से लिया गया है, जबकि नए नियम की मूल भाषा यूनानी है। अन्य भाषाओं के बाइबल अनुवादों में भी ख्रिस्टोस के लिए उसी पर आधारित शब्दों का ही उपयोग किया गया है। इसलिए, इस पुस्तक में 'मसीह' के स्थान पर 'ख्रीष्ट' शब्द का उपयोग किया गया है।

सुसमाचार क्या है?

वरन् सुसमाचार के अर्थ को भी समझना अनिवार्य है। यह अत्यावश्यक है कि हम मसीही लोग सुसमाचार को सही ढंग से समझें, क्योंकि यदि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो हम ख्रीष्ट पर अपने विश्वास की परिपूर्णता का बहुत कुछ भाग ठीक रीति से नहीं समझ पाएँगे।

सुसमाचार हमें बताता है कि अपने पापों से हमारा उद्धार कैसे हो सकता है। यदि हम इसे त्रुटिपूर्ण ढंग से समझते हैं, तो हम शापित हैं, जैसा कि पौलुस गलातियों 1:6-9 में कहता है। परन्तु यदि हम इसे सही समझ लें, तो हमारे पास आशा हो सकती है। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि हम पवित्रशास्त्र को ध्यान से खोजकर यह स्पष्ट रीति से व्यक्त कर पाएँ कि परमेश्वर हमें इस विषय में क्या बताता है कि हम उद्धार कैसे पा सकते हैं।

फरवरी 1998 में वाशिंगटन, डी.सी. में सुसमाचारवादी अगुवों की एक सभा का यही लक्ष्य था। इस बैठक में प्रतिभागी सहमत थे कि सुसमाचारवादी संसार में कुछ गम्भीर समस्याएँ हैं, जो उस एकता के टूटने को दर्शाती हैं जो बहुत पहले सोलहवीं शताब्दी में प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार (*Reformation*) के समय बनाई गई थी—एक ऐसी एकता जो 450 वर्षों तक दृढ़ बनी रही। और भले ही सुसमाचारवादी कलीसियाओं के ईश्वरविज्ञान में कई बिन्दुओं पर मतभेद रहे हों, परन्तु जब केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त की केन्द्रीय पुष्टि की बात आती है, तो उन्होंने सदा एकता की भावना बनाए रखी, जिसे ऐतिहासिक रूप से सुसमाचारवादियों ने नए नियम के सुसमाचार के लिए आवश्यक माना था।

लगभग इसी समय, एलायंस ऑफ कन्फेसिंग इवेंजेलिकलस (*Alliance of Confessing Evangelicals*) ने हमारे समय के सबसे

परमेश्वर का सुसमाचार

महत्वपूर्ण ईश्वरविज्ञानीय विषय पर विचार करने के लिए फिलाडेल्फिया में बैठक की। यह समूह इस बात पर सहमत था कि ईश्वरविज्ञानीय दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण विषय सुसमाचार ही था। फिलाडेल्फिया और वाशिंगटन की बैठकों के परिणामस्वरूप सुसमाचारवादियों के मध्य, विशेष रूप से धर्मीकरण की हमारी समझ में, एकता पुनर्स्थापित करने के लिए विश्वास का एक एकीकृत विश्वास-वक्तव्य निर्मित किया गया।

उस प्रलेख (*document*) को “यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: सुसमाचारवादी उत्सव” (“*द गॉस्पेल ऑफ़ जीसस क्राइस्ट: एन इवेंजेलिकल सेलिब्रेशन*”) कहा जाता है, और इसे दो भागों में विभाजित किया गया है। पहला भाग उन प्रमुख बिन्दुओं का सारांश है, जिनका पुष्टिकरण किया गया था। यह तकनीकी ईश्वरविज्ञानीय कथनों से बचते हुए सामान्य जन की भाषा में सुसमाचार की व्याख्या करता है। दूसरा भाग पुष्टिकरण और खण्डन के प्रारूप का अनुसरण करते हुए अधिक सटीक ईश्वरविज्ञानीय भाषा में एक कथन प्रदान करता है।*

इसे अपनी पृष्ठभूमि मानते हुए, आइए हम अपना ध्यान इस कथन पर केन्द्रित करें। पुष्टिकरण 1 बताता है:

हम पुष्टि करते हैं कि कलीसिया को सौंपा गया सुसमाचार सबसे पहले परमेश्वर का सुसमाचार है (मरकुस 1:14; रोमियों 1:1)। परमेश्वर

* The full statement can be found at <https://www.ligonier.org/learn/articles/gospel-jesus-christ-evangelical-celebration>.

सुसमाचार क्या है?

इसका लेखक है, और वह इसे अपने वचन में, और अपने वचन के द्वारा हम पर प्रकट करता है। इसका अधिकार और सत्य केवल परमेश्वर ही पर निर्भर है।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार का सत्य या अधिकार किसी मानवीय अन्तर्दृष्टि या रचनात्मकता से आता है (गलातियों 1:1-11)। हम इस बात का भी खण्डन करते हैं कि सुसमाचार का सत्य या अधिकार किसी विशेष कलीसिया या मानव संस्थान के अधिकार पर निर्भर करता है।

यह पहला अनुच्छेद पुष्टि करता है कि परमेश्वर सुसमाचार का लेखक और स्वामी है। रोमियों को लिखे अपने पत्र में पौलुस कहता है, “पौलुस की ओर से, जो ख्रीष्ट यीशु का दास है, और प्रेरित होने के लिए बुलाया गया, और परमेश्वर के उस सुसमाचार के लिए पृथक् किया गया, जिसकी प्रतिज्ञा उसने पहले से ही अपने नबियों द्वारा पवित्रशास्त्र में की” (रोमियों 1: 1-2)। पौलुस “परमेश्वर का सुसमाचार” वाक्यांश का उपयोग करता है। अब जब वह परमेश्वर के सुसमाचार के विषय में बात करता है, तो वह हमें बताता है कि सुसमाचार का सन्देश केवल परमेश्वर के विषय में सन्देश नहीं है, यद्यपि यह निश्चित रूप से वह है। परन्तु यहाँ यूनानी में “का” शब्द का अर्थ है कि सुसमाचार परमेश्वर का है। यह उसकी घोषणा है। यह उसका सन्देश है।

परमेश्वर का सुसमाचार

परमेश्वर सुसमाचार का मूल या लेखक है।

हम अंग्रेज़ी में *लेखक (author)* शब्द और *अधिकार (authority)* शब्द के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध भी देखते हैं। परमेश्वर ही वह है जो सबसे पहले सुसमाचार की घोषणा करता है। वह इसका मूल लेखक है, और इसके स्वामी और लेखक के रूप में, वही है जो सुसमाचार को इसका स्थायी अधिकार देता है। इसलिए, जिस सन्देश को हमने मसीहियों के रूप में घोषित किया है, जिसे हमने *सुसमाचार* कहा है, वह कोई ऐसा विचार नहीं है जो प्राचीन काल में कोई धार्मिक शिक्षक लेकर आया था। यहाँ तक कि पुराने नियम में भी हमें सुसमाचार की घोषणा के संकेत मिलते हैं, और निश्चित रूप से नए नियम की कलीसिया को सुसमाचार सीधे ख्रीष्ट और उसके प्रेरितों से प्राप्त हुआ। हम कह सकते हैं कि सुसमाचार का पहला महान् प्रेरित स्वयं ख्रीष्ट है, परन्तु जब ख्रीष्ट ने सुसमाचार की घोषणा की, तब भी वह पिता की इच्छा को पूरा कर रहा था। पिता ने ही पुत्र को यह घोषणा करने के लिए भेजा था। पिता ने ही पुत्र को अपने समकालीनों से यह बात कहने का अधिकार दिया था (यूहन्ना 5:19, 30)।

सोलहवीं शताब्दी के धर्मसुधार के समय में केन्द्रीय विषयों में से एक विषय हमारे धर्मिकरण से सम्बन्धित था। धर्मसुधारकों ने *सोला फिडे* (केवल विश्वास) के धर्मसिद्धान्त के लिए तर्क दिया, जिसका अर्थ है कि हम कर्मों से हटकर केवल विश्वास से ही धर्मों ठहराए जाते हैं। इसे प्रायः धर्मसुधार का *भौतिक कारण* (जनक) कहा जाता है। हम कैसे धर्मों ठहराए जाते हैं

सुसमाचार क्या है?

यह सुसमाचार का केन्द्र है, और धर्मसुधार के समय इस विषय के महत्व के कारण प्रोटेस्टेंट मसीहियों को सुसमाचारवादियों (*evangelicals*) के रूप में जाना जाने लगा। सुसमाचारवादी शब्द यूनानी शब्द युआंगेलियोन (*euangelion*) से आया है, जो सुसमाचार के लिए नए नियम का शब्द है। प्रोटेस्टेंट धर्मसुधारकों को इसलिए सुसमाचारवादी कहा जाता था क्योंकि उनका मानना था कि धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त से सम्बन्धित विवाद में दाँव पर लगी केन्द्रीय बात स्वयं सुसमाचार की विषय वस्तु थी। परन्तु पूरे विवाद के पीछे अधिकार को लेकर विवाद चल रहा था।

लूथर ने किस आधार पर अपनी मूल कलीसिया की शिक्षा से भिन्न होने का साहस किया? लूथर सार्वजनिक रूप से यह स्वीकार करने के लिए बाध्य हो गए कि उनके विचार में, पोप और कलीसिया की महासभाओं के लिए लुटि करना सम्भव था। उन्होंने कहा कि वह धर्मीकरण पर अपना दृष्टिकोण परिवर्तित करने के लिए इच्छुक होंगे यदि उन्हें यह दिखा दिया जाए कि उनकी शिक्षा बाइबल के साथ सामंजस्य नहीं रखती है। लूथर के लिए अन्तिम अधिकारी केवल और केवल पवित्रशास्त्र ही था। संकट का क्षण 1521 में वर्म्ज़ की धर्म-सभा (*Diet of Worms*) में आया जब लूथर पर अभियोग चल रहा था और उन्हें अपनी शिक्षा से पीछे हटने के लिए बुलाया गया था। उन्होंने इस प्रसिद्ध कथन के साथ उत्तर दिया: “जब तक मैं, पोप और महासभाओं द्वारा नहीं जिन्होंने कई बार स्वयं के विपरीत बातें की हैं, वरन् पवित्रशास्त्र और स्पष्ट तर्कबुद्धि के द्वारा निश्चित नहीं हो जाता हूँ, मेरा

परमेश्वर का सुसमाचार

विवेक परमेश्वर के वचन का बन्धी है। विवेक के विरुद्ध जाना न तो उचित है और न ही सुरक्षित। मैं ऐसा नहीं कर सकता और मैं इससे पीछे नहीं हटूंगा।”

इस कथन में, धर्मसुधार के औपचारिक कारण को सार्वजनिक रूप से घोषित कर दिया गया था: केवल पवित्रशास्त्र के पास ही विश्वासी के विवेक पर बाध्यकारी अधिकार है। रोम का तर्क यह था कि पवित्रशास्त्र का अधिकार कलीसिया के पूर्व अधिकार पर निर्भर करता है और कलीसिया ही है जो पवित्रशास्त्र के प्रारम्भिक अधिकार की घोषणा करती है।

स्मरण रखें कि पहला पुष्टिकरण कहता है कि परमेश्वर सुसमाचार का लेखक है; वह इसे अपने वचन में और अपने वचन के द्वारा हम पर प्रकट करता है, और इसका अधिकार और सत्य केवल उसी पर निर्भर है। केवल परमेश्वर के वचन के पास ही हमारे विवेक को बान्धने का परम पूर्ण अधिकार है। इसी प्रकार, खण्डन में कहा गया है: “हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार का सत्य या अधिकार किसी मानवीय अन्तर्दृष्टि या रचनात्मकता से आता है। हम इस बात का भी खण्डन करते हैं कि सुसमाचार का सत्य या अधिकार किसी विशेष कलीसिया या मानव संस्थान के अधिकार पर निर्भर करता है।” सुसमाचार का अधिकार परमेश्वर और केवल परमेश्वर पर ही निर्भर है।

जब हम सुसमाचार की घोषणा और प्रचार करते हैं, तो हम ईश्वरीय/दिव्य अधिकार की देख-रेख में ऐसा करते हैं। हम मनुष्य होने के नाते अपने अधिकार के आधार पर किसी को भी यीशु ख्रीष्ट पर उसके उद्धारकर्ता के रूप में

सुसमाचार क्या है?

विश्वास करने के लिए नहीं बुला सकते हैं। इसके स्थान पर, जब हम सुसमाचार का प्रचार करते हैं, तो हम उस सन्देश के सन्देश-वाहक होते हैं, जिसका मूल स्वयं परमेश्वर में है। पौलुस रोमियों को लिखे अपने पत्र के आरम्भ में यही कह रहा है। इससे पहले कि वह सुसमाचार की सामग्री की व्याख्या आरम्भ करे, वह स्वयं का परिचय एक प्रेरित के रूप में कराता है, ऐसा जन जिसे परमेश्वर ने बुलाया है और अलग किया है, परन्तु जो एक ऐसा सन्देश दे रहा है जो पौलुस का बनाया हुआ नहीं है। पौलुस का प्रेरित्य अधिकार सन्देश का अन्तिम अधिकार नहीं है। परमेश्वर इसकी घोषणा करता है। परमेश्वर इस पर अपना स्वामित्व रखता है। परमेश्वर इसे इसका अधिकार देता है।

अध्याय दो

उद्धार की सामर्थ्य

Power to Save

यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: सुसमाचारवादियों का उत्सव (“द गॉस्पेल ऑफ जीसस क्राइस्ट: एन इवेंजेलिकल सेलिब्रेशन”) के अनुच्छेद 2 और 3 के पुष्टिकरण नए नियम के सत्य पर आधारित और स्थापित है। अनुच्छेद 2 हमारे आत्मिक जीवन में प्रभावशाली सामर्थ्य के लिए परमेश्वर और उसके सुसमाचार की ओर देखने की आवश्यकता पर केन्द्रित है। अनुच्छेद 3 हमें ठहरने और यह विचारने के लिए बाध्य कर सकता है कि हम इसके पुष्टिकरण में “शुभ समाचार” कहाँ पा सकते हैं।

पुष्टिकरण 2 में लिखा है:

हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि सुसमाचार परमेश्वर की उद्धार करने वाली सामर्थ्य है, क्योंकि सुसमाचार विश्वास करने वाले प्रत्येक व्यक्ति

सुसमाचार क्या है?

को बिना किसी भेदभाव के उद्धार प्रदान करता है (रोमियों 1:16)।

सुसमाचार की यह प्रभावकारिता स्वयं परमेश्वर की सामर्थ्य से है (1 कुरिन्थियों 1:18)।

सम्बन्धित खण्डन कहता है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार की सामर्थ्य उपदेशक की वाक्पटुता, सुसमाचार-प्रचारक की तकनीक या बुद्धियुक्त तर्क के उपयोग द्वारा अनुनय में निहित है। (1 कुरिन्थियों 1:21; 2:1-5)।

पौलुस लिखता है: “मैं यूनानियों और बर्बरो, बुद्धिमानों और निर्बुद्धियों, दोनों का ऋणी हूँ। इसलिए जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं तुम्हें भी जो रोम में हो, सुसमाचार प्रचार करने के लिए उत्सुक हूँ। मैं सुसमाचार से लज्जित नहीं होता, क्योंकि यह प्रत्येक विश्वास करने वाले के लिए, पहले यहूदी और फिर यूनानी के लिए, उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ्य है” (रोमियों 1:14-16)। यहाँ पौलुस इस सुसमाचार का अर्थ और विषय-वस्तु समझा रहा है, और ऐसा करते हुए वह कहता है कि यह उद्धार के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य है।

यह कथन ऐतिहासिक सुसमाचारवादी मसीहियत के लिए इतना स्वयंसिद्ध है कि हम विचार कर सकते हैं कि आज इस प्रकार के पुष्टिकरण की आवश्यकता ही क्यों है। इस स्पष्ट तथ्य की ओर ध्यानाकर्षण क्यों करें कि सुसमाचार उद्धार के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य है? हमारे वक्तव्य में खण्डन

उद्धार की सामर्थ्य

को इस विचार को अस्वीकार करने की क्या आवश्यकता है कि परमेश्वर की उद्धार करने की सामर्थ्य प्रचारक की तकनीकों या उपदेशक की वाक्पटुता या बुद्धियुक्त तर्क की चतुराई पर टिकी हुई है? मुझे लगता है कि हमारे समय में इस प्रकार के कथन की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि हम परमेश्वर के वचन के स्थान पर विपणन (सामान बेचने की) तकनीकों का अध्ययन करने में दक्ष हो गए हैं और क्योंकि हम प्रायः ऐसे कार्यक्रमों पर अपनी आशाएँ लगाते हैं, जो हमें लगता है कि लोगों को उद्धार की अवस्था में लाने का काम करेंगे। हम यह सोचना प्रारम्भ कर देते हैं कि लोगों के जीवन को परिवर्तित करने की सामर्थ्य हमारे कार्यक्रमों या हमारी पद्धतियों में पाई जाती है, और कभी-कभी हम अपनी तकनीकों के मद (नशे) में इतने उन्मत्त हो जाते हैं कि हम सुसमाचार की स्पष्ट और साहसिक प्रस्तुति के नकारात्मक प्रभाव से डरते हैं।

लूथर ने चेतावनी दी कि जब भी सुसमाचार को साहसपूर्वक और स्पष्टता के साथ घोषित किया जाता है, तो इसका परिणाम द्वन्द्व होता है। यह वह द्वन्द्व है जिससे बहुत से लोग किसी भी रीति से बचना चाहते हैं। कभी-कभी हम सुसमाचार को अस्पष्ट करने के लिए हर सम्भव प्रयास करते हैं क्योंकि हमें डर होता है कि हमारी कलीसिया में संघर्ष लाने की इसकी शक्ति हमारी मण्डली पर नकारात्मक प्रभाव डालेगी। हम सुसमाचार को छोड़कर हर वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, यह भूलते हुए कि यह सुसमाचार ही है जिसे परमेश्वर ने अपनी सामर्थ्य और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य प्रदान की है।

जब पौलुस कहता है कि सुसमाचार उद्धार के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य

सुसमाचार क्या है?

है, तो वह कह रहा है कि इस सन्देश में परमेश्वर ने मानव जाति का छुटकारा करने के लिए स्वर्ग के संसाधनों को निवेशित किया है। परमेश्वर ही है जो अपने सुसमाचार को सशक्त बनाता है। यह सुसमाचार ही है जिसके साथ पवित्र आत्मा आता है और संसार को पाप और धार्मिकता के विषय में निरुत्तर करने और लोगों को विश्वास और अनन्त जीवन के लिए नया जन्म देने के साधन के रूप में उपयोग करने की प्रतिज्ञा करता है। यदि हम उस सामर्थ्य को रोक देते हैं और उसके स्थान पर किसी अन्य मानवीय सामर्थ्य को रखने का प्रयास करते हैं, तो हम कलीसिया के पूरे उद्देश्य को ही खो रहे हैं।

हमें बार-बार स्मरण दिलाए जाने की आवश्यकता है कि यदि हम अपनी कलीसियाओं में परमेश्वर और पवित्र आत्मा की शक्तिशाली उपस्थिति देखना चाहते हैं, तो हमें यह स्मरण रखना होगा कि सामर्थ्य सुसमाचार के प्रचार के माध्यम से प्रकट होती है। हाँ, द्वन्द्व होगा। हाँ, कुछ लोग बुरा मानेंगे। परन्तु यह वह मूल्य है जो हम विश्वासयोग्यता के लिए और लोगों को उद्धार दिलाने की परमेश्वर की सामर्थ्य के लिए चुकाते हैं।

खण्डन में कहा गया है कि सुसमाचार उपदेशक की वाक्पटुता पर आधारित नहीं है। वाक्पटुता में कोई पाप नहीं है, और उपदेशकों द्वारा अपने वरदानों को सुधारने के प्रयास में कुछ भी अनुचित नहीं है। मसीही विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम उपदेशकों को सार्वजनिक प्रवचन की अच्छी पद्धतियों और उनके उपदेशों के लिए विषय वस्तु को व्यवस्थित करने का प्रशिक्षण देने में सहायता करते हैं। परन्तु हम सुसमाचार की प्रभावकारिता हेतु

उद्धार की सामर्थ्य

शक्ति स्रोत के लिए रूप और वाक्पटुता की उन बातों पर भरोसा नहीं करते हैं। पौलुस लिखता है:

क्योंकि क्रूस की कथा नाश होने वालों के लिए मूर्खता है, परन्तु हम उद्धार पाने वालों के लिए परमेश्वर का सामर्थ्य है। क्योंकि लिखा है,

“मैं ज्ञानियों के ज्ञान को नाश करूँगा

और बुद्धिमानों की बुद्धि को व्यर्थ कर दूँगा।”

कहाँ रहा ज्ञानी? कहाँ रहा शास्त्री? कहाँ रहा इस युग का विवादी? क्या परमेश्वर ने इस संसार के ज्ञान को मूर्खता नहीं ठहराया? क्योंकि जब परमेश्वर के ज्ञान के अनुसार यह संसार अपने ज्ञान से परमेश्वर को न जान सका, तो परमेश्वर को यह अच्छा लगा कि इस प्रचार की मूर्खता के द्वारा विश्वास करने वालों का उद्धार करें। (1 कुरिन्थियों 1:18-21)

और बाद में:

भाइयो, जब मैं तुम्हारे पास परमेश्वर के विषय में गवाही देता हुआ आया तो शब्दों या ज्ञान की उत्तमता के साथ नहीं आया। क्योंकि मैंने यह ठान लिया था कि तुम्हारे बीच यीशु ख्रीष्ट वरन क्रूस पर चढ़ाए गए ख्रीष्ट को छोड़ और किसी बात को न जानूँ। मैं निर्बलता और भय के साथ थरथराता हुआ तुम्हारे साथ रहा। मेरा सन्देश और मेरा प्रचार ज्ञान के

सुसमाचार क्या है?

लुभाने वाले शब्दों में नहीं था, परन्तु आत्मा और सामर्थ्य के प्रमाण में था, जिससे कि तुम्हारा विश्वास मनुष्यों के ज्ञान पर नहीं परन्तु परमेश्वर की सामर्थ्य पर आधारित हो। (1 कुरिन्थियों 2:1-5)

पौलुस संकेत देता है कि उसकी बोलने की क्षमता में कुछ कमी हो रही होगी, परन्तु यदि उसके पत्रों को देखकर कोई भी प्रेरित पौलुस पर अस्पष्ट वक्ता होने का आरोप नहीं लगाएगा। कम से कम अपने लेखन में तो पौलुस निश्चित रूप से वाक्पटु है ही। पौलुस अद्भुत बुद्धि का प्रदर्शन करता है, और उसके मस्तिष्क की कुशाग्रता और उसके बुद्धिसम्पन्न तर्क की शक्ति अप्रतिरोध्य है। परन्तु पौलुस ने मानवीय क्षमताओं पर अपना विश्वास नहीं रखा। उसे दृढ़ विश्वास था कि सामर्थ्य उसके कौशल या तकनीक में नहीं वरन् परमेश्वर में है। और जिन बातों को परमेश्वर बुद्धिमान मानता है उन्हें यह संसार प्रायः मूर्खता मानता है। तो फिर, यहाँ वाक्पटुता या सुसमाचार प्रचार के तकनीकों या बुद्धियुक्त तर्क के महत्व का नहीं, वरन् उद्धार करने के लिए इन वस्तुओं की सामर्थ्य का खण्डन किया जा रहा है।

अनुच्छेद 3 में, हमारा ध्यान मानव अवस्था की पापपूर्ण स्थिति पर केन्द्रित होता है। पुष्टिकरण 3 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि सुसमाचार विश्वव्यापी मानवीय अवस्था को परमेश्वर के प्रति पापपूर्ण विद्रोह के रूप में निदान करता है, जो यदि अपरिवर्तित

उद्धार की सामर्थ्य

रही, तो प्रत्येक व्यक्ति को परमेश्वर के दण्ड के अन्तर्गत अनन्त हानि तक पहुँचाएगी।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम मानव स्वभाव की पतितता की किसी भी अस्वीकृति का या मानव जाति के स्वाभाविक अच्छेपन या दिव्यता के दावे का खण्डन करते हैं।

सुसमाचार अच्छा समाचार है। यह ख्रीष्ट के व्यक्ति और कार्य का सारांश प्रस्तुत करता है और हमें बताता है कि ख्रीष्ट ने हमारे लिए जो किया है उसका लाभ हम कैसे प्राप्त कर सकते हैं। परमेश्वर के समक्ष पापपूर्ण विद्रोह की सार्वभौमिक मानवीय अवस्था की घोषणा कैसे अच्छे समाचार का भाग हो सकती है, और इस प्रलेख में ऐसा कथन क्यों सम्मिलित किया गया होगा? उस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हम फिर से पौलुस की ओर देख सकते हैं।

रोमियों 1 में, पौलुस सुसमाचार का परिचय देता है, समझाता है कि सुसमाचार उद्धार के लिए परमेश्वर की सामर्थ्य है, और उस सुसमाचार के प्रकाशन की बात करता है। बाद में वह सुसमाचार की विषय-वस्तु की व्याख्या करता है। परन्तु इससे पहले कि वह उस तक पहुँचे, ऐसा लगता है मानो वह मूल विषय से हटकर पतन की मानवीय स्थिति के विषय में बात करता है। पौलुस लिखता है, “इसलिए परमेश्वर का प्रकोप मनुष्यों की समस्त अभक्ति और अधार्मिकता पर स्वर्ग से प्रकट होता है क्योंकि वे सत्य को अधर्म से दबाए

सुसमाचार क्या है?

रखते हैं” (रोमियों 1:18)।

पूरे रोमियों 1-3 में, पौलुस सुसमाचार की आवश्यकता के लिए आधार तैयार करता है। सुसमाचार उस रोग का उपचार है, जिसने हमें उजाड़ दिया है। इससे पहले कि कोई भी चिकित्सक किसी रोग को ठीक करे, उसे पहले अपने मरीज की जाँच करने और रोग का निदान करने की आवश्यकता होती है। किसी के लिए भी सुसमाचार को अच्छे समाचार के रूप में सुनने के लिए आवश्यक है कि वह पहले बुरे समाचार को समझे, यह समझने के लिए कि आखिरकार हमें सुसमाचार की आवश्यकता क्यों है।

इतिहास में प्रोटेस्टेंट पास्टरों और शिक्षकों ने परमेश्वर की व्यवस्था बताने और समझाने के द्वारा कलीसिया के लोगों को सुसमाचार की हमारी आवश्यकता को समझने में सहायता की है। जब तक लोग व्यवस्था को नहीं समझते हैं और यह नहीं समझते कि हमने व्यवस्था तोड़ी है और इसलिए हम परमेश्वर के न्याय के अधीन हैं, तब तक सुसमाचार के समाचार में कोई भलाई नहीं है। आज बहुत से लोग सुसमाचार सुनते हैं और कहते हैं, “तो क्या हुआ?” क्योंकि वे उस संकटपूर्ण स्थिति के प्रति असंवेदनशील हो गए हैं, जिसमें वे स्वयं को परमेश्वर के सामने विद्रोही के रूप में पाते हैं।

सुसमाचार के केन्द्र में मेल-मिलाप का सन्देश है। मेल-मिलाप से पहले अलगाव होता है। लोग आज सुसमाचार के विषय में उत्साहित इसलिए नहीं होते क्योंकि उन्हें विश्वास नहीं है कि उनके और परमेश्वर के बीच कोई वास्तविक अलगाव है। परन्तु पवित्रशास्त्र—विशेषकर रोमियों 2 और 3 में

उद्धार की सामर्थ्य

पौलुस—सिखाता है कि सभी मनुष्यों ने परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह किया है। सभी ने उसके सत्य को विकृत कर दिया है। परमेश्वर की सृष्टि में विद्रोहियों के रूप में हम उसे परमेश्वर के रूप में सम्मान देने या उसके प्रति आभारी होने से मना करते हैं (रोमियों 1:21)। यह हर किसी के विषय में सच है। सारा संसार परमेश्वर के न्यायालय में दोषी बनकर आता है; कोई भी धर्मी नहीं है। कोई भी भलाई नहीं करता है, और सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हो गए हैं (रोमियों 3:10-12, 23)। जब तक हम यह नहीं समझें, तब तक हम वास्तव में सुसमाचार के महत्व को नहीं समझेंगे।

केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण इतना महत्वपूर्ण क्यों है? यह महत्वपूर्ण है क्योंकि परमेश्वर धर्मी है और हम नहीं हैं। जो परमेश्वर स्वर्ग और पृथ्वी पर राज्य करता है वह पवित्र और धर्मी परमेश्वर है जो अपने सिद्ध न्याय के अनुसार हमारा न्याय करेगा, और हम अधर्मी हैं। यदि परमेश्वर अपने न्याय के मानक के अनुसार हमारा न्याय करे, तो हम सदैव उसके दण्ड के अधीन रहेंगे। जब तक हम उन बातों को नहीं समझते, धर्मीकरण का धर्मसिद्धान्त महत्वहीन लगता है। परन्तु यदि हम समझ जाते हैं कि परमेश्वर धर्मी है और हम धर्मी नहीं हैं, तो यह प्रश्न कि एक अधर्मी व्यक्ति को पवित्र और न्यायी परमेश्वर की दृष्टि में कैसे धर्मी ठहराया जा सकता है, सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न बन जाता है, जिसका हमें सामना करना है (रोमियों 3:21 -28)। और इसलिए अनुच्छेद 3 का खण्डन कहता है कि हम मानव स्वभाव की पतितता की किसी

सुसमाचार क्या है?

भी अस्वीकृति या मानव जाति की उपस्थित अच्छाई या दिव्यता के किसी भी दावे का खण्डन करते हैं।

लिग्निएर के 'ईश्वरविज्ञान की स्थिति' (लिग्निएर स्टेट ऑफ थियोलॉजी) सर्वेक्षण में सुसमाचारवादी होने का दावा करने वाले पचपन प्रतिशत उत्तरदाता इस कथन से सहमत थे कि यद्यपि हर कोई थोड़ा पाप करता है, अधिकांश लोग स्वभाव से अच्छे होते हैं। यह दृष्टिकोण मूल पाप की वास्तविकता और एक उद्धारकर्ता की हमारी आवश्यकता को नकारता है, और यह भयावह है। जो कोई भी इस पर विश्वास करता है, वह रेत के घर में शरण ले रहा है और परमेश्वर के न्याय आसन के सामने असफल होने के गम्भीर संकट में है। बाइबल हमें बताती है कि हम पाप में जन्मे हैं और परमेश्वर के धर्मी न्याय के अधीन हैं (इफिसियों 2:1-3)। हम अपने आप में अच्छे नहीं हैं, और हम स्वयं का उद्धार नहीं कर सकते; हमें एक उद्धारकर्ता की आवश्यकता है। हमारे पाप के कारण, हमें सुसमाचार की आवश्यकता है।

अध्याय तीन

यीशु: एकमात्र उद्धारकर्ता

Jesus: The Only Savior

हम अमेरिकी जनता से पुष्टिकरण 4 से अधिक किसी अन्य पुष्टिकरण का प्रतिरोध करने की अपेक्षा नहीं कर सकते। ऐसा कहा जा सकता है कि यह पुष्टिकरण पूर्ण रीति से गैर-अमेरिकी है। किसी एक धर्म की अनन्यता (*exclusivity*) का कोई भी दावा बहुलवाद (*pluralism*) और सापेक्षवाद (*relativism*) की जड़ पर प्रहार करता है। हम इस विचार से अभिभूत किए गए हैं कि जब तक आप निष्ठापूर्ण (ईमानदार) हैं, तब तक इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि आप किस वस्तु पर विश्वास करते हैं, और कि सभी मार्ग स्वर्ग ले जाते हैं। क्या परमेश्वर इतना संकीर्ण है कि वह केवल एक ही मार्ग के प्रति विशुद्ध निष्ठा की माँग करता है? निश्चित रूप से हमारे प्रलेख (*document*)

सुसमाचार क्या है?

के निर्माता पवित्रशास्त्र की स्पष्ट शिक्षा के प्रति विश्वासयोग्य हैं।

पुष्टिकरण 4 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट ही उद्धार का एकमात्र मार्ग है, वह परमेश्वर और मानव जाति के बीच एकमात्र मध्यस्थ है (यूहन्ना 14:6; 1 तीमुथियुस 2:5)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट और उसके सुसमाचार के अलावा किसी अन्य ढंग से किसी का उद्धार हो सकता है। बाइबल ऐसी कोई आशा नहीं देती कि यीशु ख्रीष्ट पर व्यक्तिगत विश्वास के बिना अन्य धर्मों के निष्ठापूर्ण उपासकों का उद्धार होगा।

यीशु ने अपने शिष्यों के समक्ष घोषणा की: “मार्ग, सत्य और जीवन मैं ही हूँ। बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुँच सकता” (यूहन्ना 14:6)। प्रेरित पौलुस ने लिखा है कि परमेश्वर और मानव जाति के बीच ख्रीष्ट ही एकमात्र मध्यस्थ है: “क्योंकि परमेश्वर एक ही है और परमेश्वर तथा मनुष्यों के बीच एक ही मध्यस्थ भी है, अर्थात् ख्रीष्ट यीशु, जो मनुष्य है। जिसने अपने आप को सब की फिरौती के दाम में दे दिया और इसकी साक्षी उचित समय पर दी गई” (1 तीमुथियुस 2:5-6)।

यीशु: एकमात्र उद्धारकर्ता

मध्यस्थ एक बिचवई होता है, वह व्यक्ति जो दो पक्षों के बीच में खड़ा होता है, सामान्यतः क्योंकि वे अलग हो चुके हैं या किसी प्रकार के विवाद में सम्मिलित हैं। पूरे बाइबल इतिहास में, विशेष रूप से पुराने नियम में, कई लोगों ने मध्यस्थों के रूप में कार्य किया। उदाहरण के लिए, मूसा पुरानी वाचा का मध्यस्थ था। उसने परमेश्वर के साथ अपनी वार्ताओं में इस्राएल के लोगों का प्रतिनिधित्व किया और वह लोगों के के समक्ष परमेश्वर का प्रवक्ता भी था। पुराने नियम में नबियों का भी मध्यस्थ का कार्य था; वे लोगों के समक्ष परमेश्वर के प्रवक्ता थे। वे लोगों और परमेश्वर के बीच खड़े होते थे, और इसलिए परमेश्वर नबियों से बात करता था या स्वयं को उन पर प्रकट करता था। तब नबी मध्यस्थ होकर लोगों से कहते थे, “यहोवा यों कहता है।” इस्राएल के याजक और पुराने नियम के हारून के वंश के याजकों ने भी मध्यस्थ के रूप में कार्य किया और लोगों के लिए परमेश्वर से बात की। वे लोगों की ओर से मध्यस्थ थे। यहाँ तक कि इस्राएल का राजा भी एक प्रकार का मध्यस्थ था, क्योंकि वह अपनी अन्तर्निहित शक्ति से राज्य नहीं कर रहा था, वरन् वह लोगों के समक्ष परमेश्वर का प्रतिनिधि था। इसीलिए परमेश्वर ने राजा को पुराने नियम की व्यवस्था के अनुसार धार्मिकता से राज्य करने का उत्तरदायित्व दिया।

जब पौलुस कहता है कि यीशु ख्रीष्ट परमेश्वर और मनुष्यों के बीच एकमात्र मध्यस्थ है, तो वह इन अन्य मध्यस्थों के पदों का खण्डन नहीं कर रहा है। इसके स्थान पर वह मध्यस्थता की भूमिका के सन्दर्भ में ख्रीष्ट के मध्यस्थ पद

सुसमाचार क्या है?

की अद्वितीयता (*uniqueness*) पर ध्यान केन्द्रित कर रहा है। मध्यस्थ के रूप में ख्रीष्ट की भूमिका पूर्ण रूप से अद्वितीय है, और यह अद्वितीयता न केवल उसके मध्यस्थता के कार्य में पाई जाती है, वरन् उसके व्यक्ति में भी पाई जाती है—ख्रीष्ट और केवल ख्रीष्ट ही परमेश्वर-मनुष्य है। वह देहधारी परमेश्वर है, परमेश्वर हमारे साथ। और परमेश्वर और मानव जाति के बीच मेल-मिलाप और छुटकारा लाने के लिए परमेश्वर ने क्या किया? परमेश्वर पुत्र ने मानव देह को धारण किया और परमेश्वर तथा उसके लोगों के बीच मेल-मिलाप करवाने के लिए दोनों के मध्य खड़ा हो गया। मध्यस्थता के उस कार्य में, विशेष रूप से प्रायश्चित्त के कार्य के साथ, केवल ख्रीष्ट और केवल ख्रीष्ट ही के पास वह करने की योग्यता है जो अन्ततः मेल-मिलाप करवाने के लिए आवश्यक है।

कैण्टरबरी के एंसेल्म ने अपनी पुस्तक *कर डेयुस होमो* (परमेश्वर-मनुष्य क्यों?) में बताया कि हमारे उद्धार के लिए यह क्यों आवश्यक है कि हमारा मध्यस्थ वह हो जिसके पास दिव्यता और मानवता दोनों हों। अब ऐसी कौन सी वस्तु है जो मसीही विश्वास को संसार के अन्य सभी धर्मों से अद्वितीय और अलग बनाती है? उत्तर सरल है: यह ख्रीष्ट है। किसी अन्य धर्म में कोई दिव्य-मानवीय मध्यस्थ नहीं है। इस संसार में किसी अन्य धर्म के पास ऐसा प्रायश्चित्त नहीं है जो परमेश्वर और मनुष्य के बीच की दूरी को पाट सके। कोई भी अन्य वैश्विक अगुवा या वैश्विक धार्मिक अगुवा कभी भी मृतकों में से जी नहीं उठा। कन्फ्यूशियस के पास बुद्धि थी, परन्तु वह मर गया और वह मरा ही रहा। मुहम्मद मर गया। बुद्ध मर गया और ऐसे और भी हैं। परन्तु केवल यीशु

यीशु: एकमात्र उद्धारकर्ता

ख्रीष्ट के पास ही परमेश्वर और मनुष्य के बीच मेल कराने की क्षमता थी। और कोई भी पापरहित नहीं था। हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि ख्रीष्ट ही उद्धार का एकमात्र मार्ग है, क्योंकि केवल उसके पास ही मध्यस्थता का वह कार्य करने के लिए आवश्यक योग्यताएँ हैं जो मेल-मिलाप के लिए अपरिहार्य हैं।

लोग कभी-कभी पूछते हैं, “परमेश्वर इतना संकीर्ण क्यों है कि उसने केवल एक ही उद्धारकर्ता प्रदान किया?” इसके स्थान पर लोगों को पूछना चाहिए, “परमेश्वर ने हमें एक उद्धारकर्ता भी क्यों दिया? वह हम सभी को दोषी क्यों नहीं ठहरा देता और हमें वह देकर अपना न्याय क्यों नहीं करता जिसके हम योग्य हैं? परमेश्वर ने अपने अनुग्रह की गहराई और भरपूरी में हमें एक ऐसा मध्यस्थ देने के लिए इतना कष्ट क्यों उठाया, जो हमारे स्थान पर खड़ा हो, जो वह न्याय प्राप्त करे जिसके हम योग्य हैं, और जो हमें वह धार्मिकता प्रदान करे जिसकी हमें अपरिहार्य रूप से आवश्यकता है?” लोगों को, विशेषकर उन मसीही लोगों को जो यीशु ख्रीष्ट की अद्वितीयता को हल्के में लेते हैं, सावधान रहने की आवश्यकता है। परमेश्वर अपने पुत्र के निमित्त जलन रखता है। यीशु उसका एकलौता पुत्र है। नए नियम में तीन बार परमेश्वर को बोलते हुए सुना गया है, और उनमें से दो अवसर स्वर्ग से उसके पुत्र की पहचान के विषय में घोषणाएँ हैं। “यह मेरा पुत्र है; उसकी सुनो (मत्ती 3:17; 17:5 देखें; यूहन्ना 12:28 के साथ तुलना करें)। लोग उस पद पर किसी और को नहीं बैठा सकते जिसके लिए परमेश्वर ने ख्रीष्ट को अनादिकाल से नियुक्त किया है, जहाँ केवल वह ही महिमा और सम्मान, प्रभुत्व और सामर्थ्य प्राप्त

सुसमाचार क्या है?

करने के योग्य है। परमेश्वर हर स्थान पर सभी मनुष्यों को ख्रीष्ट को ग्रहण करने और उसका सम्मान करने की आज्ञा देता है। परमेश्वर किसी अन्य को स्वीकार नहीं करेगा।

ध्यान दें कि जब पौलुस यह कहता है कि केवल एक ही मध्यस्थ है, तो वह यह कहकर इसकी भूमिका प्रदान करता है कि केवल एक ही परमेश्वर है। इसी अद्वितीयता को पूरे पुराने नियम में घोषित किया गया था, जहाँ परमेश्वर ने मूर्तिपूजा की भर्त्सना की। सबसे पहली आज्ञा अनन्यता (*exclusivity*) की आज्ञा थी: “तू मुझे छोड़ दूसरों को ईश्वर करके न मानना” (निर्गमन 20:3)। अन्य देशों की मूर्तियों की आराधना को परमेश्वर से भर्त्सना मिली। वह झूठे धर्म से प्रसन्न नहीं हुआ, वरन् उसने इसे अपनी महिमा के विरुद्ध एक व्यवस्थित विद्रोह के रूप में देखा। पौलुस इन सत्यों को एक साथ गूँथ देता है। परमेश्वर एक ही है, और परमेश्वर का केवल एक ही पुत्र है, और परमेश्वर तथा मानव जाति के मध्य केवल एक ही मध्यस्थ है। जो लोग बहुलवाद में डूबे हुए हैं उनके लिए इसे स्वीकार करना कठिन है, परन्तु इस विषय पर उनका झगड़ा यीशु ख्रीष्ट और उसके प्रेरितों के साथ है। बाइबल ऐसी कोई आशा नहीं देती कि यीशु ख्रीष्ट पर व्यक्तिगत विश्वास के बिना अन्य धर्मों के निष्ठापूर्ण उपासकों का उद्धार हो जाएगा।

कुछ लोगों का मानना है कि अन्य विश्व-धर्मों के अनुयायियों का ख्रीष्ट के द्वारा उद्धार किया जा सकता है, इस तर्क के साथ कि वे वास्तव में किसी और वस्तु या किसी और व्यक्ति को अपनी आराधना चढ़ाकर अज्ञानता में

यीशु: एकमात्र उद्धारकर्ता

यीशु की ही आराधना कर रहे हैं। उनका तर्क यह है कि जो कोई भी निष्ठाव्यक्त आराधक या सच में धार्मिक प्रवर्ति का व्यक्ति है, उस पर परमेश्वर ख्रीष्ट के कार्य के लाभों को लागू कर देगा। अनुच्छेद 4 के खण्डन में कहा गया है कि न केवल ख्रीष्ट आवश्यक है, वरन् ख्रीष्ट पर व्यक्तिगत विश्वास भी आवश्यक है। जैसा कि पौलुस ने अरेस की पहाड़ी पर यूनानियों से बात की, “इसलिए अज्ञानता के समय की उपेक्षा करके परमेश्वर अब हर जगह के सब मनुष्यों को आज्ञा देता है कि पश्चात्ताप करें। क्योंकि उसने एक दिन निश्चित किया है जिसमें, एक मनुष्य के द्वारा जिसको उसने नियुक्त किया है, वह धार्मिकता से संसार का न्याय करेगा; और उसने मृतकों में से उसे जिलाकर इस बात को सब मनुष्यों पर प्रमाणित कर दिया है” (प्रेरितों 17:30-31)। सभी लोगों से यीशु ख्रीष्ट की आराधना करने और उस पर विश्वास की घोषणा करने की सार्वभौमिक माँग की गई है।

आइए अनुच्छेद 5 को देखें। पुष्टिकरण 5 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि कलीसिया को परमेश्वर द्वारा आज्ञा दी गई है और इसलिए वह प्रत्येक जीवित व्यक्ति को सुसमाचार का प्रचार करने के परमेश्वर-प्रदत्त दायित्व के अधीन है (लूका 24:47; मत्ती 28:18-19)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि किसी विशेष वर्ग या व्यक्तियों

सुसमाचार क्या है?

के समूह, भले ही उनकी जातीय या सांस्कृतिक पहचान कुछ भी हो, को सुसमाचार के प्रचार में अनदेखा किया जा सकता है या छोड़ा जा सकता है (1 कुरिन्थियों 9:19-22)। परमेश्वर प्रत्येक जाति, भाषा और राष्ट्र के लोगों से बनी एक वैश्विक कलीसिया का उद्देश्य रखता है (प्रकाशितवाक्य 7:9)।

अनुच्छेद 5 कलीसिया के उद्देश्य की पुष्टि करता है, जिसे कलीसिया के प्रभु द्वारा परिभाषित किया गया है। वह आज्ञा देता है कि कलीसिया सुसमाचार प्रचार में लगी रहे। कलीसिया के लिए सुसमाचार प्रचार कभी भी वैकल्पिक नहीं है। यदि कलीसिया को प्रभु, अर्थात् कलीसिया के सिर के प्रति आज्ञाकारी होना है तो सुसमाचार-प्रसार कभी भी कलीसिया के लिए वैकल्पिक नहीं है। वह कलीसिया को आज्ञा देता है कि प्रत्येक जीवित व्यक्ति को सुसमाचार प्रचार किया जाए।

ऐतिहासिक मसीहियत की एक बहुत ही निन्दनीय बात यह है कि कलीसिया इस आज्ञा का पालन करने में कितनी अनिच्छुक रही है। आज संसार में लाखों लोगों ने यीशु ख्रीष्ट के विषय में कभी नहीं सुना है। हमने महान् आदेश को पूरा नहीं किया है। हमने वह नहीं किया है जो कलीसिया के रूप में करने के लिए हम उत्तरदायी हैं।

अनुच्छेद 5 का खण्डन कहता है, “हम इस बात का खण्डन करते हैं कि किसी विशेष वर्ग या व्यक्तियों के समूह, भले ही उनकी जातीय या सांस्कृतिक पहचान कुछ भी हो, को सुसमाचार के प्रचार में अनदेखा किया जा सकता

है या छोड़ा जा सकता है।” विभिन्न प्रकार की कलीसियाएँ ऐसे लोगों पर ध्यान केन्द्रित करती हैं जो नस्ल, जातीयता, वर्ग, सामाजिक आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि आदि के सन्दर्भ में एक निश्चित ढाँचे में आते हैं। हम एक निश्चित मार्ग पर चलने की प्रवृत्ति रखते हैं, और हम अपने जैसे लोगों पर अपनी पहुँच केन्द्रित करते हैं। परन्तु अनुच्छेद 5 का खण्डन बताता है कि हमें अनन्य (*exclusive*) नहीं बनना है। हमें प्रत्येक कल्पनीय पृष्ठभूमि, प्रत्येक जातीय समूह और प्रत्येक धार्मिक समूह के लोगों को सुसमाचार का प्रचार करना है। कभी-कभी हम उन लोगों को प्रचार नहीं करते जो अन्य विश्व-धर्मों में सम्मिलित हैं क्योंकि हम सोचते हैं कि उन्हें कलीसिया की प्रचार की सेवकाई से बाहर रखा जाना चाहिए। नहीं, परमेश्वर के लोगों के लिए परमेश्वर की आज्ञा है कि बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक भाषा, प्रत्येक राष्ट्र, प्रत्येक जनजाति, प्रत्येक जीवित व्यक्ति को सुसमाचार का प्रचार करें। यह एक महान् दायित्व है और हम इसे पूरा करने में लज्जापूर्ण रूप से असफल रहे हैं।

अध्याय चार

यीशु परमेश्वर-मनुष्य

Jesus the God-Man

ख्री ष्ट का ईश्वरत्व, सुसमाचार का एक अत्यावश्यक बिन्दु है। सुसमाचार की विषयवस्तु, जैसा कि हम इसे नए नियम में पाते हैं, यीशु ख्रीष्ट के व्यक्ति और कार्य पर केन्द्रित है। और यद्यपि हम ख्रीष्ट के व्यक्ति और उसके कार्य के बीच अन्तर करते हैं, हमें उन्हें अलग करने का दुःसाहस नहीं करना चाहिए। उसके व्यक्ति की महानता उसके कार्य को वैध और प्रभावशाली बनाती है, और उसके कार्य में और उसके कार्य के माध्यम से हमें इस बात की गहरी समझ प्राप्त होती है कि वह कौन है, अतः वह कौन है और वह क्या करता है, अर्थात् जो वह हमारे लिए सम्पन्न करता है, उसके बीच एक घनिष्ठ सम्बन्ध है। अनुच्छेद 6 इसी के विषय में है। पुष्टिकरण 6 में लिखा है:

सुसमाचार क्या है?

हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट पर ईश्वरीय वचन (या लोगोस, यूहन्ना 1:1) के रूप में विश्वास करना, अर्थात् कि वह त्रिपुक्तता का द्वितीय जन, जो कि पिता और पवित्र आत्मा (इब्रानियों 1:3) के साथ सह-शाश्वत और सह-तात्त्विक है, सुसमाचार पर विश्वास के लिए आधारभूत है।

इसके सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट के विषय में कोई भी दृष्टिकोण जो उसके पूर्ण ईश्वरत्व को घटाता है या अस्वीकार करता है, वह सुसमाचार सम्बन्धित विश्वास है या उद्धार का लाभ प्रदान करेगा।

हम देखते हैं कि यीशु के विषय में पुष्टि की गई पहली बात यह है कि वह ईश्वरीय वचन है। यह स्पष्ट रीति से यूहन्ना 1 को इंगित करता है, जहाँ ख्रीष्ट को शाश्वत लोगोस या वचन कहा गया है: “आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन परमेश्वर था” (यूहन्ना 1:1)। बाद में हम पढ़ते हैं, “और वचन देहधारी हुआ और हमारे बीच में निवास किया” (पद 14)। यह उस बात को सन्दर्भित करता है जिसे हम लोगोस ख्रीष्टविज्ञान कहते हैं।

कलीसिया के इतिहास की पहली तीन शताब्दियों में मसीही ईश्वरविज्ञान के अन्तर्गत ईश्वरीय वचन या शाश्वत लोगोस के इस विचार पर, जिसके विषय में यूहन्ना अपने सुसमाचार में बताता है, बहुत ध्यान दिया गया।

प्रारम्भिक कलीसिया में जो लोग यूनानी दर्शन की परम्पराओं से परिचित थे, उन्होंने शास्त्रीय यूनानी दर्शन में *लोगोस* शब्द का पूरा अर्थ समझा। *लोगोस* अलौकिक सुसंगतता और व्यवस्था (*transcendent coherence and order*) के सिद्धान्त को व्यक्त करता था, जो सब कुछ को एक एकीकृत सृष्टि में एक साथ लाता है। यूनानियों के लिए, *लोगोस* एक अमूर्त सिद्धान्त था और निश्चित रूप से इसे एक व्यक्ति के रूप में नहीं सोचा जाता था। यूहन्ना ने इस शब्द को यूनानी दार्शनिक संस्कृति से लिया था, परन्तु उसने इसे अपरिवर्तित नहीं छोड़ा। इसके स्थान पर, उसने व्यक्तिगत परमेश्वर की इब्रानी अवधारणा को इस शब्द में उण्डेल दिया।

हम ख्रीष्ट की शाश्वतता की पुष्टि करते हैं और यीशु को घटाकर एक सृजे गए प्राणी मात्र बना देने के किसी भी प्रयास का विरोध करते हैं। पुष्टिकरण 6 में इस बात की और भी अधिक पुष्टि की गई है, जो ख्रीष्ट को पिता और पवित्र आत्मा के साथ सह-शाश्वत और सह-तात्त्विक बताता है। यह लिएक परमेश्वर के धर्मसिद्धान्त को संक्षेप में परिभाषित करता है और हमें प्रारम्भिक शताब्दियों की महान् सार्व-कलीसियाई महासभाओं (*ecumenical councils*) का स्मरण दिलाता है, विशेष रूप से नीकिया की महासभा और चालसीदोन की महासभा की। नीकिया की महासभा, जिसने हमें नीकिया का विश्वास वचन दिया, उस संकट के कारण आयोजित की गई थी जिसका कलीसिया ने चौथी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में एरियस नाम के एक व्यक्ति की शिक्षा के सम्बन्ध में सामना किया था। एरियस ने अपने सहयोगियों के साथ, लिएकता

सुसमाचार क्या है?

के धर्मसिद्धान्त और ख्रीष्ट के ईश्वरत्व को अस्वीकार कर दिया था, यह तर्क देते हुए कि ख्रीष्ट पहला सृजा गया प्राणी था जिसे परमेश्वर ने बनाया था और ख्रीष्ट या *लोगोस* ने फिर संसार का निर्माण किया। परन्तु भले ही वह संसार का सृष्टिकर्ता था, *लोगोस* स्वयं एक सृजा गया प्राणी था और इसलिए समय में उसका आरम्भ हुआ था, और एक सृजे गए प्राणी होने के नाते, वह निश्चित रूप से परमेश्वर से कम था।

एरियस ने तर्क दिया कि यह *लोगोस* कुछ बातों में परमेश्वर जैसा था। उसने कहा कि *लोगोस* परमेश्वर के साथ *होमोइऊसिओस* (*homoiousios*) था, जिसका अर्थ है “उसी प्रकार के सारतत्त्व का।” एरियस इस बात से सहमत था कि *लोगोस* अपने अस्तित्व में पिता के जैसा था परन्तु उसने कहा कि *लोगोस* पिता के सारतत्त्व का नहीं था। अर्थात्, वह परमेश्वर के अस्तित्व में भागी नहीं था। वह परमेश्वर नहीं था। कलीसिया के शास्त्रसम्मत (*orthodox*) समूहों ने, जो लिएकता को मानते थे, चौथी शताब्दी में एरियनवाद की निन्दा की। उन्होंने *होमोऊसिओस* (*homoousios*) शब्द के उपयोग पर बल दिया, जिसका अर्थ है “उसी सारतत्त्व का।” चौथी शताब्दी से लिएकता का शास्त्रसम्मत दृष्टिकोण यह रहा है कि परमेश्वरत्व के तीन व्यक्ति सारतत्त्व में एक हैं, यद्यपि वे व्यक्ति में तीन हैं। इसलिए जब पुष्टिकरण 6 ईश्वरीय वचन को पिता और पवित्र आत्मा के साथ सह-शाश्वत और सह-तात्त्विक होने की बात करता है, तो वह यही बात कर रहा है। यीशु ख्रीष्ट के पूर्ण ईश्वरत्व का अंगीकार सुसमाचार के विश्वास के लिए मूलभूत और सारतात्त्विक (*essential*) है। ऐसा हो ही नहीं सकता कि कोई भी व्यक्ति

उद्धार के लिए यीशु ख्रीष्ट की ओर देखे और उसके ईश्वरत्व को नकार दे, जैसा कि एरियनवादियों ने किया था।

नीकिया और चाल्सीदोन के बाद एरियनवाद समाप्त नहीं हुआ। द चर्च ऑप जीसस क्राइस्ट ऑफ लेटर-डे सेंट्स (*The Church of Jesus Christ of Latter-day Saints*) (मॉर्मन) और यहोवा के साक्षी (*Jehovah Witnesses*) ख्रीष्ट के ईश्वरत्व को नकारने में एरियस की अगुवाई का अनुसरण करते हैं। यद्यपि ये धर्म यीशु को एक ऊँचे स्थान पर रखते हैं, फिर भी वे पिता के साथ उसकी सह-शाश्वतता या सह-तात्त्विकता को नकारकर एरियनवादी दृष्टिकोण का अनुसरण करते हैं। उदाहरण के लिए, मॉर्मन लोग ख्रीष्ट के पूर्व-अस्तित्व के एक संस्करण को मानते हैं, अर्थात्, वह संसार के प्रारम्भ होने से पहले अस्तित्व में था। परन्तु वे उसकी शाश्वतता को अस्वीकार करते हैं। यहाँ हम एरियनवाद के साथ सम्बन्ध देखते हैं: परमेश्वर ने पहले ख्रीष्ट को बनाया, और फिर ख्रीष्ट ने संसार को बनाया। इस प्रकार ख्रीष्ट संसार से पहले अस्तित्व में था, परन्तु वह सदा से नहीं है। वह एक सृजा गया प्राणी है—सबसे उच्च सृजा गया प्राणी, परन्तु फिर भी एक सृजा गया प्राणी ही।

एरियनवाद ने न केवल कलीसिया के ईश्वरविज्ञान के लिए वरन् कलीसिया की आराधना के लिए भी एक समस्या उत्पन्न की। मसीहियत ऐतिहासिक यहूदी धर्म से विकसित हुई, और नया नियम पुराने नियम का खण्डन नहीं करता है। पुराना नियम स्पष्ट रूप से किसी भी सृजे गए प्राणी की आराधना करने पर रोक लगाता है। किसी सृजे गए प्राणी की आराधना करना—भले ही

सुसमाचार क्या है?

वह प्राणी कितना भी ऊँचा क्यों न हो—मूर्तिपूजा का सार है। यही एक कारण है कि नया नियम कुलुस्सियों और इब्रानियों जैसी पुस्तकों में इस विचार का खण्डन करने के लिए इतना परिश्रम करता है कि यीशु एक सर्वोच्च स्वर्गदूत है। पवित्रशास्त्र स्पष्ट है कि ख्रीष्ट स्वर्गदूतों से ऊपर है और वास्तव में पिता और आत्मा के समान ईश्वरीय सारतत्त्व का है।

जिस प्रकार ख्रीष्ट के ईश्वरत्व की स्पष्ट पुष्टि बाइबलीय सुसमाचार का अभिन्न अंग है, उसी प्रकार ख्रीष्ट की मानवता की स्पष्ट पुष्टि भी बाइबलीय सुसमाचार का अभिन्न अंग है। हम इसे पुष्टिकरण 7 में पाते हैं:

हम पुष्टि करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट देहधारी परमेश्वर है (यूहन्ना 1:14)। कुंवारी से जन्मा दाऊद का वंशज होते हुए (रोमियों 1:3), उसके पास एक सच्चा मानवीय स्वभाव था, वह परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन था (गलातियों 4:5), और सब बातों में हमारे सामान था, सिवाय पाप के (इब्रानियों 2:17; 7:26-28)। हम पुष्टि करते हैं कि सुसमाचार पर विश्वास के लिए ख्रीष्ट की सच्ची मानवता पर विश्वास सारतात्विक है।

इसके सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि कोई भी जन जो ख्रीष्ट की मानवता, उसके देहधारण या उसकी पापहीनता को नकारता है, या जो यह मानता है कि ये सत्य सुसमाचार के लिए सारतात्विक नहीं हैं, उद्धार पाएगा (1 यूहन्ना 4:2-3)।

यीशु परमेश्वर-मनुष्य

यदि हम पाँचवीं शताब्दी में जाकर चाल्सीदोन की महासभा में जाएँ, तो हम कलीसिया को यह अंगीकार करते हुए पाते हैं कि यीशु ख्रीष्ट वास्तव में मनुष्य और वास्तव में परमेश्वर हैं, जिसके दो भिन्न स्वभाव हैं: एक मानवीय स्वभाव और एक ईश्वरीय स्वभाव। जिस प्रकार यीशु ख्रीष्ट के ईश्वरीय स्वभाव की पुष्टि करना महत्वपूर्ण है, जैसा कि कलीसिया चौथी शताब्दी में करने के लिए सावधान थी, उसी प्रकार यीशु ख्रीष्ट की मानवता की घोषणा करना भी महत्वपूर्ण है। यह उसकी मानवता में ही है कि ख्रीष्ट नया आदम बना, स्वयं को व्यवस्था के अधीन करके, पूर्ण धार्मिकता का जीवन जीकर और हमारे पापों के प्रायश्चित के रूप में स्वयं को क्रूस पर बलिदान के रूप में देने के द्वारा वह हमारा मानव प्रतिनिधि बन गया। अपनी मानवता में सिद्ध पाप रहित जीवन जीना उसके छुटकारे के कार्य के लिए निर्णायक था। हमारा उद्धारकर्ता बनने की योग्यता पाने के लिए यीशु का पाप रहित होना आवश्यक था। यीशु को सिद्ध आज्ञाकारिता का जीवन जीना था। यदि उसने पाप किया होता, तो वह स्वयं के लिए प्रायश्चित करने के योग्य भी नहीं रहता, हमारे लिए और हमारे पापों के लिए करना तो दूर की बात है। हम देखते हैं कि ख्रीष्ट की पापहीनता हमारे छुटकारे की बाइबलीय अवधारणा से कैसे जुड़ी हुई है।

यहाँ इस बात की पुष्टि की गई है कि यीशु देहधारी परमेश्वर है। हम स्मरण करते हैं कि “वचन देहधारी हुआ और हमारे बीच में निवास किया” (यूहन्ना 1:14)। वह इममानुएल है, परमेश्वर हमारे साथ। वह दाऊद का कुंवारी से जन्मा वंशज है। हाँ, ख्रीष्ट जिस प्रकार से संसार में आया, वह चमत्कारिक था। परन्तु अपने मानवीय स्वभाव के सन्दर्भ में वह दाऊद की वंशावली का है।

सुसमाचार क्या है?

नया नियम यीशु के दाऊद का पुत्र और साथ ही दाऊद का प्रभु होने के महत्व पर ध्यान आकर्षित करता है। और भजन 110:1 कहता है: “यहोवा ने मेरे प्रभु से कहा, ‘मेरे दाहिने बैठ जब तक कि मैं तेरे शत्रुओं को तेरे चरणों की चौकी न बना दूँ।’” यह जन जो दाऊद के मूल और वंश से निकला था, वह साथ ही साथ दाऊद का प्रभु भी था। बाइबलीय श्रेणियों में उसे दाऊद का महान् पुत्र कहा जाता है। नए नियम में यह महत्वपूर्ण है कि यीशु ख्रीष्ट दाऊद का वंशज हो, क्योंकि पुराने नियम की मसीहाई नबूवतों में कहा गया था कि ख्रीष्ट दाऊद के समान एक राजा होगा और उसे यहूदा के गोत्र से होना होगा। यहूदा के गोत्र को राज्य की प्रतिज्ञा उसी समय की गई थी जब याकूब ने अपने पुत्रों को पैत्रिक आशीर्ष दी थीं (उत्पत्ति 49:10)। नया नियम विशेष ध्यान देकर लिखता है कि अपने मानव वंश के सन्दर्भ में यीशु यहूदा के गोत्र से था और इसलिए वह यहूदा का सिंह, राजाओं का राजा और प्रभुओं का प्रभु होने के योग्य था, जिससे कि मसीहा के विषय में की गई पुराने नियम की नबूवतें पूरी हुईं।

अनुच्छेद 7 कहता है कि हम इस बात का खण्डन करते हैं कि कोई भी जन जो ख्रीष्ट की मानवता, उसके देहधारण या उसकी पापहीनता को नकारता है, या जो यह मानता है कि ये सत्य सुसमाचार के लिए सारतात्विक नहीं हैं, उद्धार पाएगा। यह एक दृढ़ खण्डन है। यह उद्धार के पूरे प्रश्न को यीशु की मानवता की पुष्टि के सम्बन्ध में दाँव पर रखता है। इस प्रलेख के

निर्माताओं की दृष्टि में कलीसिया को सबसे आरम्भिक विधर्मी शिक्षाओं में से एक से निपटना था, जिसे स्वयं नए नियम में सम्बोधित किया गया है: आभासवाद (*Docetism*) की विधर्मता। आभासवादी, जो यूनानी दर्शन से और भौतिक संसार के विषय में नकारात्मक दृष्टिकोण से प्रभावित थे, इस बात को नकारते थे कि यीशु के पास वास्तविक मानव देह थी। उनका मानना था कि यह अकल्पनीय है कि कोई भी ईश्वर कभी मानव देह के साथ जुड़ जाए, क्योंकि जो भौतिक है वह स्वाभाविक रूप से दोषपूर्ण है। यूनानियों के लिए वास्तविक ठोकर का कारण पुनरुत्थान नहीं वरन् देहधारण था।

अपनी पत्रियों में यूहन्ना ख्रीष्ट-विरोधी के आत्मा के विषय में बात करते समय एक कड़ा रुख अपनाता है। यूहन्ना और नए नियम के अन्य लेखकों की दृष्टि में जो कोई भी परमेश्वर के सच्चे देहधारण और यीशु की सच्ची मानवता को नकारता था, वह ख्रीष्ट-विरोधी था। और क्योंकि नया नियम यीशु के मानव स्वभाव की वास्तविकता पर बल देता है, इस प्रलेख के निर्माता ख्रीष्ट के ईश्वरत्व और ख्रीष्ट की मानवता दोनों की पुष्टि करते हैं। हमें स्मरण है कि अनुच्छेद 5 में पुष्टि की गई थी कि ख्रीष्ट परमेश्वर और मनुष्यों के बीच एकमाल मध्यस्थ है, और ऐसा इसलिए है क्योंकि केवल वही है, जो दो स्वभाव अर्थात् ईश्वरीय स्वभाव और मानवीय स्वभाव को धारण करता है।

जब हम मसीहियत के इतिहास को देखते हैं, तो हम पाते हैं कि चार शताब्दियों में यीशु ख्रीष्ट के ईश्वरत्व पर आक्रमण हुआ। चौथी शताब्दी में

सुसमाचार क्या है?

एरियनवादी विवाद देखा गया, और पाँचवीं शताब्दी में 451 में चाल्सिदोन की महासभा का आयोजन करना पड़ा। फिर हमने उन्नीसवीं शताब्दी के उदारवादी ईश्वरविज्ञान का उदय देखा जिसने वस्तुतः सभी अलौकिक वस्तुओं, विशेषकर यीशु ख्रीष्ट के ईश्वरत्व को नकार दिया। यह बीसवीं शताब्दी तक चला। यीशु ख्रीष्ट के ईश्वरत्व का पूर्ण अंगीकार उन प्रमुख विवादों में से एक है जिनसे कलीसिया को हमारे समय के मुख्य सम्प्रदायों (*denominations*) में उन्नीसवीं सदी के उदारवाद के प्रभाव के कारण निपटना पड़ा है। हमें जागरूक होने की आवश्यकता है कि हम कलीसिया के इतिहास के उन युगों में से एक में रह रहे हैं जिसमें यीशु ख्रीष्ट के ईश्वरत्व पर आक्रमण हुआ है। हमें सावधान रहना होगा कि ख्रीष्ट को मानव तक सीमित कर देने वाले लोगों के सामने ख्रीष्ट के ईश्वरत्व की पुष्टि करने के हमारे उत्साह में हम उसकी मानवता की वास्तविकता को धुन्धला न कर दें। हमें उसके ईश्वरत्व और उसकी मानवता दोनों को बनाए रखने की आवश्यकता है।

अध्याय पाँच

सिद्ध बलिदान

The Perfect Sacrifice

न ए नियम के शुभ समाचार के केन्द्र में क्रूस का सन्देश है। अपनी मृत्यु में ख्रीष्ट ने एक ऐसा कार्य किया जिसने परमेश्वर और उन सभी के बीच मेल-मिलाप को स्थापित किया, जो ख्रीष्ट पर भरोसा करते हैं। इसीलिए प्रेरित पौलुस ने कहा कि उसने ठान लिया था कि वह ख्रीष्ट वरन् क्रूस पर चढ़ाए गए ख्रीष्ट को छोड़ और किसी भी बात का प्रचार नहीं करेगा (1 कुरिन्थियों 2:2)। अनुच्छेद 8 का यही केन्द्र बिन्दु है। पुष्टिकरण 8 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि ख्रीष्ट का प्रायश्चित्त, जिसके द्वारा उसने अपनी आज्ञाकारिता में, एक सिद्ध बलिदान दिया, और परमेश्वर की शाश्वत

सुसमाचार क्या है?

योजना के अनुसार हमारे स्थान पर हमारे पापों का मूल्य चुका कर और ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट करके पिता के क्रोध को शान्त किया, सुसमाचार का एक अपरिहार्य तत्व है।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि प्रायश्चित का कोई भी दृष्टिकोण जो विश्वासियों के लिए उनके स्थान पर पूरा किए गए ईश्वरीय न्याय की प्रतिस्थापनीय सन्तुष्टिकरण (*substitutionary satisfaction*) को अस्वीकार करता है, सुसमाचार की शिक्षा के अनुकूल है।

प्रायश्चित पाप के लिए किया गया भुगतान है। यह हमारे द्वारा व्यक्तिगत रूप से किया गया भुगतान नहीं है, क्योंकि हम परमेश्वर को किसी भी प्रकार का बलिदान देने में असमर्थ हैं, जो उसके न्याय की माँगों को पूरा कर सकेगा। परमेश्वर का चरित्र प्रायश्चित को आवश्यक बनाता है, क्योंकि वह पूर्णतः न्यायी है। वह इतना न्यायप्रिय है कि वह पाप को अनदेखा नहीं करता या अपनी सत्यता और धार्मिकता के प्रति अपने समर्पण को नहीं छोड़ता। जैसा कि हमने पहले देखा, सुसमाचार शुभ समाचार है क्योंकि यह उस सबसे बड़ी दुविधा का उत्तर देता है जिसका कोई भी मनुष्य सामना करेगा: क्योंकि हम पापी हैं, हम न्यायोचित या धर्मी नहीं हैं, और परमेश्वर अपरिवर्तनीय रूप से और शाश्वत

सिद्ध बलिदान

रूप से न्यायी और धर्मी बना रहता है। तो प्रश्न यह है, कि अधर्मी मनुष्य न्यायी और पवित्र परमेश्वर के न्याय से बचने की आशा कैसे कर सकता है?

इस समस्या का समाधान परमेश्वर की शाश्वत योजना में पाया जाता है, जिसके अन्तर्गत वह अपने लोगों के लिए उद्धार का मार्ग इस प्रकार प्रदान करता है कि उनके पाप ढाँपें जाएँ और परमेश्वर का अपना न्याय भी सन्तुष्ट हो जाए। परमेश्वर अपनी धार्मिकता से समझौता नहीं करेगा। सुसमाचार में परमेश्वर स्वयं को धर्मी और अधर्मियों को धर्मी ठहराने वाला, दोनों के रूप में प्रकट करता है (रोमियों 3:25-26)। यहाँ जो निर्णायक कार्य दिखाई दे रहा है वह क्रूस पर यीशु ख्रीष्ट का कार्य है, जिसके द्वारा उसने अपने लोगों के लिए प्रायश्चित्त प्रदान किया है। ख्रीष्ट द्वारा आज्ञाकारिता में किया गया यह प्रायश्चित्त एक सिद्ध बलिदान है जो हमारे पापों का भुगतान करके और ईश्वरीय न्याय को सन्तुष्ट करके पिता के क्रोध को शान्त करता है।

प्रायश्चित्त के सम्बन्ध में जिन दो शब्दों पर प्रायः बात होती है वे हैं पापनिष्कृति (*expiation*) और कोपसन्तुष्टि (*propitiation*)। पापनिष्कृति का सम्बन्ध हमारे पापों को हमसे दूर करने से है। पुराने नियम में प्रायश्चित्त के दिन एक से अधिक पशुओं की बलि दी जाती थी (लैव्यव्यवस्था 16)। तथ्य तो यह है कि महायाजक को परमेश्वर को प्रायश्चित्त का प्रतिस्थापनीय बलिदान (*substitutionary sacrifice*) चढ़ाने से पहले अपने शुद्धिकरण के लिए कई पशुओं की बलि देनी पड़ती थी। तब याजक अपने हाथों को एक बकरे के—अर्थात् प्रायश्चित्त के बकरे के—सिर पर रखता था, और बकरे को

सुसमाचार क्या है?

परमेश्वर की उपस्थिति से दूर, छावनी से दूर जंगल में भेज दिया जाता था। यह परमेश्वर की उपस्थिति से लोगों के पापों को दूर करने का प्रतीक था, या जिसे हम पाप की क्षमा कहते हैं, जिसका अर्थ है कि वह दूर हो जाता है।

बाइबल पापनिष्कृति के विचार को समझाने के लिए इस प्रकार की भाषा का उपयोग करती है “उदयाचल अस्ताचल से जितनी दूर है उसने हमारे अपराधों को हमसे उतनी ही दूर कर दिया है” (भजन संहिता 103:12)। इसलिए हमारे पापों का निवारण हो गया है क्योंकि परमेश्वर ने वैधानिक रूप से हमारे दोष और पाप को हमारे खाते से खीष्ट पर स्थानान्तरित कर दिया, जो हमारा पाप का बोझ उठाने वाला है। क्रूस के विषय में नए नियम के प्रेरितियों दृष्टिकोण को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण खण्ड यशायाह 53 है, जो हमें प्रभु के उस दास के विषय में बताता है जो अपने लोगों के अधर्म के बोझ को वहन करता है। प्रभु को यही भाया कि उसे कुचले और हमारे पापों को उस पर डालकर उसे दण्डित करे। यह पापनिष्कृति है—हमारे पाप हमारे खाते से खीष्ट पर स्थानान्तरित कर दिए गए हैं। क्रूस पर, जब खीष्ट ने स्वयं को हमारे स्थान पर एक सिद्ध बलिदान के रूप में दिया, तो उसने वह सब ऋण अपने ऊपर ले लिया जो हमें चुकाना था।

पुराने नियम में परमेश्वर की व्यवस्था का उल्लंघन करने का अर्थ था उसके अभिशाप के अधीन आना। इसी प्रकार जब हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हैं, तो हम उसके अभिशाप, और दुष्टता के प्रति उसके न्याय के अधीन आ जाते हैं। यदि हमें स्वयं उसके न्याय का सामना करना पड़े, तो

सिद्ध बलिदान

हम बिना किसी बचाव के परमेश्वर के क्रोध की पूर्ण भयंकरता के सामने आ जायेंगे। परन्तु गलातियों में पौलुस हमें बताता है कि ख्रीष्ट ने अपने ऊपर वह शाप ले लिया, जिसके हम योग्य हैं (गलातियों 3:13)। वह हमारे प्रतिस्थापन (*substitute*) के रूप में ऐसा करता है। जिस शाप के हम योग्य हैं, वह हमारे स्थान पर यीशु द्वारा वहन कर लिया गया। इसका अर्थ है, जैसा कि खण्डन में कहा गया है, कि ख्रीष्ट ने एक प्रतिस्थापनीय प्रायश्चित (*substitutionary atonement*) प्रदान किया। मूल्य का भुगतान एक प्रतिस्थापन अर्थात् वास्तविक दोषी पक्ष के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया गया। वैधानिक दृष्टिकोण से, हम सभी ने परमेश्वर के विरुद्ध पाप किया है और हमने उसकी सिद्धता के प्रति एक ऋण, एक नैतिक ऋणग्रस्तता अर्जित की है। हम ऐसे ऋणी हैं जो अपना ऋण नहीं चुका सकते।

जिन्हें हम आर्थिक ऋण और नैतिक ऋण कहते हैं, उनके बीच में अन्तर है। आर्थिक ऋण उस प्रकार का ऋण है जो हम तब अर्जित करते हैं जब हम धन के सम्बन्ध में ऋणी होते हैं। जब हम प्रभु की प्रार्थना में कहते हैं, “और जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों (ऋणियों) को क्षमा किया है, वैसे ही तू भी हमारे अपराधों (ऋणों) को क्षमा कर” (मत्ती 6:12), हम आर्थिक ऋण की बात नहीं कर रहे हैं; हम नैतिक ऋणग्रस्तता के विषय में बात कर रहे हैं। इस विषय में मेरा प्रिय उदाहरण एक छोटे लड़के का है जो कुल्फी की दुकान पर जाता है और पिस्ता कुल्फी माँगता है। सेविका उसे कुल्फी देती है और कहती है, “बीस रुपये हो गए।” जब बच्चा अपनी जेब में हाथ डालता है

सुसमाचार क्या है?

और दस रुपय का नोट निकालता है तो उसके मुख पर घबराहट की झलक आ जाती है, और वह कहता है, “पर मेरी माँ ने मुझे केवल दस ही रुपय दिए।” उसके पास अपनी कुल्फी का भुगतान करने, अपना ऋण चुकाने के लिए पर्याप्त पैसे नहीं हैं। यह देखकर मैं सेविका के पास जाता हूँ और उसे दस रुपय का एक नोट दे देता हूँ। अब प्रश्न यह है कि क्या वह सेविका उस भुगतान को स्वीकार करने के लिए बाध्य है? हाँ। मैं बच्चे की ओर से वैधानिक भुगतान दे रहा हूँ, और सेविका को अब वह भुगतान लेना ही होगा क्योंकि ऋण का भुगतान किया जा रहा है। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि ऋण का भुगतान कौन करता है, जब तक कि ऋण का भुगतान व्यक्ति के नाम पर किया जाता है।

परन्तु मान लीजिए कि परिदृश्य अलग है। कल्पना करें कि मैं दुकान में खड़ा हूँ और सेविका अन्दर कहीं है। यह छोटा लड़का दुकान में भाग कर जाता है, काउंटर के पीछे जाता है, एक कुल्फी निकालता है, और द्वार से बाहर भागने लगता है। फिर सेविका उसे गर्दन से पकड़ लेती है और कहती है: “अरे रुको, छोटू। तू कर क्या रहा है?” फिर वह पुलिस को बुलाती है क्योंकि लड़के ने कुल्फी चुराई है। एक पुलिस अधिकारी आता है और सेविका बताती है कि उसने इस छोटे लड़के को कुल्फी चुराते हुए पकड़ा है। यह सब देखकर, मैं कहता हूँ: “मेरे पास बीस रुपय हैं। मुझे बीस रुपये चुकाने दो, और यह सब बात भूल जाओ।” तो क्या सेविका उस भुगतान को स्वीकार करने के लिए बाध्य है? नहीं, क्योंकि हमारे सामने अब जो है, वह केवल आर्थिक ऋण नहीं है वरन् नैतिक ऋण भी है। यदि कोई प्रतिस्थापन नैतिक ऋण के परिणाम या

सिद्ध बलिदान

दण्ड का भुगतान करने का प्रस्ताव रखे, तो जिसके विरुद्ध अपराध हुआ है उसे चुनना है कि वह प्रतिस्थापनीय भुगतान स्वीकार करेगा या नहीं।

ख्रीष्ट के प्रायश्चित में, पिता अपने पुत्र द्वारा दिए गए बलिदान को स्वीकार करता है और उसका न्याय सन्तुष्ट हो जाता है। जबकि *पापनिष्कृति* (*expiation*) का सम्बन्ध हमारे पापों को स्वयं से दूर करने या पाप-क्षमा से है, *कोपसन्तुष्टि* (*propitiation*) का सम्बन्ध परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्ध से है। प्रायश्चित में, ख्रीष्ट परमेश्वर को सन्तुष्ट करने के लिए परमेश्वर की माँगों को पूरा करता है, जो परमेश्वर को उन सभी को छुटकारे के लाभ प्रदान करने में सक्षम बनाता है, जिनका कोप सन्तुष्ट करने वाले, अर्थात् यीशु द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है।

अब, कलीसिया के इतिहास में प्रायश्चित के कई सिद्धान्तों ने प्रायश्चित की (परमेश्वर के न्याय को) सन्तुष्ट करने वाली और प्रतिस्थापनीय प्रकृति (*substitutionary nature*) को नकारा है। कुछ लोगों ने प्रायश्चित को केवल मानवीय आत्म-बलिदान के एक वीरतापूर्ण कार्य के उदाहरण या एक ऐसे वस्तुगत पाठ तक सीमित कर दिया है, जिसे परमेश्वर इस संसार को यह बताने के लिए सिखाता है कि वह पाप और धार्मिकता के विषय में गम्भीर है। अनुच्छेद 8 का खण्डन इन विधर्मी विचारों को अस्वीकार करता है और प्रायश्चित की प्रतिस्थापनीय और (परमेश्वर के न्याय को) सन्तुष्ट करने वाली प्रकृति की पुष्टि करता है।

प्रायश्चित को सम्बोधित करने के बाद हमारा प्रलेख एक और महत्वपूर्ण सत्य की ओर संकेत करता है जो हमारे उद्धार के केन्द्र में है: दोहरा अभ्यारोपण (*double imputation*)। पुष्टिकरण 9 में लिखा है:

सुसमाचार क्या है?

हम पुष्टि करते हैं कि ख्रीष्ट के उद्धारक कार्य में हमारे स्थान पर उसका जीवन और उसकी मृत्यु दोनों सम्मिलित थे (गलातियों 3:13)। हम घोषणा करते हैं कि ख्रीष्ट की उस पूर्ण आज्ञाकारिता में विश्वास सुसमाचार के लिए आवश्यक है, जिसके द्वारा उसने हमारे स्थान पर परमेश्वर की व्यवस्था की सभी मांगों को पूरा किया।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि हमारा उद्धार ख्रीष्ट के पूर्ण धार्मिक जीवन के सन्दर्भ के बिना केवल या विशेष रूप से ख्रीष्ट की मृत्यु के द्वारा उपार्जित किया गया था।

एक ओर, हमारा दोष और हमारा पाप हमारे स्थान पर ख्रीष्ट पर स्थानान्तरित कर दिया जाता है या उसके विरुद्ध गिना जाता है। परन्तु इसके साथ-साथ, हमारा पूर्ण उद्धार तब होता है जब परमेश्वर उस योग्यता (*merit*) और धार्मिकता को हमारे खाते में स्थानान्तरित कर देता है जिसे यीशु ने अपने पूर्ण आज्ञाकारिता के जीवन में अर्जित की थी। इसलिए, सुसमाचार केवल ख्रीष्ट की मृत्यु के विषय में सन्देश नहीं है; यह यीशु ख्रीष्ट के जीवन के विषय में भी सन्देश है। ख्रीष्ट का जीवन और ख्रीष्ट की मृत्यु दोनों ही हमारे उद्धार के लिए आवश्यक हैं। छुटकारे का कार्य इसलिए नहीं सम्पन्न हुआ क्योंकि यीशु ख्रीष्ट शुभ शुक्रवार के दिन पृथ्वी पर आया, मरा और फिर स्वर्ग चला गया।

सिद्ध बलिदान

इसके स्थान पर वह एक स्त्री से जन्मा, और उसने अपने जीवन के आरम्भ से लेकर अपनी मृत्यु के समय तक स्वयं को व्यवस्था के हर बिन्दु के अधीन रखा। वह परमेश्वर की वाचा के लोगों का नया प्रतिनिधि, अन्तिम आदम है। जैसे मानव जाति का प्रथम प्रतिनिधि आदम की अनाज्ञाकारिता के द्वारा मृत्यु और सभी प्रकार के विनाशकारी परिणाम संसार में आए, वैसे ही नया नियम अन्तिम आदम की बात करता है, जिसकी आज्ञाकारिता के द्वारा हमें ठीक किया जा सकता है और परमेश्वर के साथ हमारा मेल मिलाप करवाया जा सकता है (1 कुरिन्थियों 15:21-22, 45)।

ख्रीष्ट की मृत्यु के द्वारा पाप पर नकारात्मक न्याय सन्तुष्ट और पूरा होता है, परन्तु उसके जीवन के द्वारा योग्यता और धार्मिकता का सकारात्मक उपार्जन पूरा होता है। इस बात को समझें कि हमें दोनों की आवश्यकता है। हमें कुछ ऐसा चाहिए जो हमारे दोष को दूर कर दे, और प्रायश्चित्त यही करता है। परन्तु यदि ख्रीष्ट ने केवल यही किया है, तो यह हमें वापस उसी स्थिति में छोड़ देगा। यह हमें निर्दोषता देगा, परन्तु यह हमें धार्मिकता नहीं देगा। धार्मिकता एक ऐसी वस्तु है जिसे उपार्जित करना होता है। और हम अपने आप में इसे उपार्जित करने में सक्षम नहीं हैं। बात यह है कि सुसमाचार घोषणा करता है कि ख्रीष्ट हमारे लिए मरा और वह हमारे लिए जीया भी। उसने अभ्यारोपण (*imputation*) द्वारा हमारा दोष ले लिया। वह हमें अपनी योग्यता भी अभ्यारोपण द्वारा देता है।

ख्रीष्ट की पूर्ण आज्ञाकारिता पर विश्वास, जिसके द्वारा उसने हमारे लिए

सुसमाचार क्या है?

परमेश्वर की व्यवस्था की सभी माँगों को पूरा किया, उद्धार के लिए आवश्यक है। जब हम ख्रीष्ट पर अपना भरोसा रखते हैं, तो हम न केवल उसके व्यक्ति पर वरन् हमारे लिए पूरा किए गए उसके कार्य पर भी अपना भरोसा रखते हैं। सुसमाचार पर विश्वास करना स्वयं के प्रयासों द्वारा परमेश्वर के न्याय की माँगों को पूरा करने के लिए पर्याप्त धार्मिकता के साथ जीवन जीने की आशा को त्यागना है और इसके स्थान पर उस पर भरोसा करना और उस पर निर्भर होना है जिसे ख्रीष्ट ने अपने जीवन में और साथ ही अपनी मृत्यु में हमारे लिए किया।

सुसमाचार के स्पष्ट शब्दों के नीचे, जो कि घोषणा करता है कि हम यीशु ख्रीष्ट पर विश्वास के द्वारा धर्मी ठहरे हैं, यह मौन धारणा छिपी हुई यह है कि परमेश्वर के समक्ष धर्मीकरण कर्मों और केवल कर्मों के द्वारा ही होता है। वह कैसे हो सकता है? क्या हम केवल विश्वास के द्वारा धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त की रक्षा दृढ़ता से नहीं करते हैं? तो फिर केवल कर्मों के द्वारा धर्मीकरण कैसे हो सकता है? ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारा धर्मीकरण यीशु ख्रीष्ट के कर्मों के द्वारा होता है। जब हम कहते हैं कि हम विश्वास के द्वारा धर्मी ठहरे हैं तो हमारा यही तात्पर्य है। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारा उन कर्मों पर विश्वास और निर्भरता है जो हमसे अलग किसी और द्वारा किए गए हैं। यीशु के कर्म ही हैं जो धार्मिकता और परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं की आशीष अर्जित करते हैं, और उसके अच्छे कर्मों के द्वारा ही परमेश्वर ने मानव जाति के साथ जो मूल वाचा बाँधी थी, वह पूरी हुई। जहाँ आदम अपने कर्मों में असफल हुआ, वहीं

सिद्ध बलिदान

ख्रीष्ट अपने कर्मों में विजयी हुआ, और यह उसके अच्छे कर्मों के कारण ही है कि जब हम उस पर अपना विश्वास रखते हैं तो उसके अच्छे कर्मों से हमें छुटकारा मिलता है। अन्तिम विश्लेषण में, हमारा न्याय कर्मों के आधार पर ही किया जाएगा, और हम दो में से एक प्रकार से परमेश्वर के सामने खड़े होंगे। या तो हम अपने कर्मों के आधार पर परमेश्वर के न्याय के सामने खड़े होंगे, या हम ख्रीष्ट के कार्य के आधार पर खड़े होंगे। यदि हम अपने कार्यों के आधार पर खड़े हों, मैं आपको आश्चस्त करता हूँ कि आपके लिए यह बुरा समाचार होगा। यदि हम ख्रीष्ट के कार्य के आधार पर खड़े होंगे, तो हम सुसमाचार के शुभ सन्देश पर खड़े होंगे।

अध्याय छः

पुनरुत्थान और धर्मीकरण

Resurrection and Justification

नए नियम में, जब प्रारम्भिक कलीसिया ने ख्रीष्ट के सन्देश की घोषणा की, तो इसमें यीशु के जीवन का सारांश सम्मिलित था जिसमें क्रूस और प्रायश्चित के साथ-साथ पुनरुत्थान भी सम्मिलित था। वह जी उठा वाक्यांश नए नियम के सन्देश और सम्पूर्ण ऐतिहासिक मसीहियत को समझने के लिए अति महत्वपूर्ण है, जैसा कि हम “यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार” प्रलेख के अनुच्छेद 10 में परिलक्षित देखते हैं। पुष्टिकरण 10 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि मृतकों में से ख्रीष्ट का शारीरिक पुनरुत्थान बाइबलीय सुसमाचार के लिए अत्यावश्यक है (1 कुरिन्थियों 15:14)।

सुसमाचार क्या है?

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम हर उस तथाकथित सुसमाचार की वैधता का खण्डन करते हैं जो ख्रीष्ट के शारीरिक पुनरुत्थान की ऐतिहासिक वास्तविकता को अस्वीकार करता है।

यीशु के पुनरुत्थान में पहली बात जो हम देखते हैं वह यह है कि इसके द्वारा ख्रीष्ट स्वयं धर्मी सिद्ध हुआ था। वह अपने आप में पाप रहित था। मृत्यु का उस पर कोई दावा नहीं था क्योंकि मृत्यु पाप के लिए परमेश्वर का दण्ड है, और यदि कोई पूरी रीति से पाप रहित है, तो उसे पाप के लिए सदाकालीन दण्ड देना परमेश्वर की ओर से अन्याय होगा। हम जानते हैं कि ख्रीष्ट ने स्वेच्छा से हमारे पाप को अपने ऊपर ले लिया था, और क्रूस पर उसने जो कष्ट सहा वह उसके दोष के कारण नहीं, वरन् हमारे दोष के कारण था। फिर भी, परमेश्वर पुनरुत्थान के माध्यम से अपने पुत्र की निर्दोषता और धार्मिकता की घोषणा करता है। यही कारण है कि पवित्रशास्त्र कहता है कि मृत्यु के लिए उसे अपने वश में रखे रहना असम्भव था (प्रेरितों के काम 2:24)। संशयवादियों (*sceptics*) का कहना है कि हम पुनरुत्थान पर विश्वास नहीं कर सकते, क्योंकि किसी के लिए भी मृतकों में से वापस आना असम्भव है। नया नियम असम्भवता को इसके ठीक विपरीत दृष्टिकोण से देखता है: उसके लिए यह असम्भव है कि वह मृतकों में से वापस न आये—क्योंकि वह निर्दोष था।

पुनरुत्थान और धर्मीकरण

सुसमाचार के लिए पुनरुत्थान इतना महत्वपूर्ण होने का दूसरा कारण यह है कि नया नियम यह घोषणा करता है कि ख्रीष्ट ने हमारे पापों के लिए प्रायश्चित किया और वह हमारे धर्मीकरण के लिए जिलाया गया। परमेश्वर के समक्ष हमारा धर्मीकरण ख्रीष्ट के कार्य पर निर्भर है। अब कल्पना कीजिए कि उसने पूर्ण धार्मिकता का जीवन जीया, मर गया, और मरा ही रहा। तो हमारे पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं रहता कि उसने जो बलिदान दिया, उसे पिता ने कभी स्वीकार किया था। परन्तु जैसा कि पौलुस ने अरेस की पहाड़ी पर अपने भाषण में हमें बताया, पिता पुत्र को धर्मी प्रमाणित करता है और पुनरुत्थान के माध्यम से उसके मेल-मिलाप के कार्य की सत्यता दिखाता है (प्रेरितों के काम 17:22-31)। परमेश्वर अपने पुत्र को मृतकों में से जीवित करके साक्षी देता है कि वह उसके कार्य से सन्तुष्ट है।

यह एक ऐसा बिन्दु है जिसे हमें अनदेखा नहीं करना चाहिए। प्रायः, जब मसीही लोग यीशु ख्रीष्ट के पुनरुत्थान के विषय में सोचते हैं, तो पुनरुत्थान से जो मुख्य लाभ हम खोजते हैं वह इससे आने वाली आशा है कि हम कब्र से जी उठेंगे। निश्चित रूप से, नया नियम हमें बताता है कि ख्रीष्ट केवल अपने लिए ही नहीं, वरन् उन लोगों के प्रथम फल के रूप में जिलाया गया, जो पुनरुत्थान में भाग लेंगे, जो हमारे लिए प्रदर्शित करता है कि परमेश्वर ने ख्रीष्ट की धन्यता को उन सभी के साथ साझा करने की प्रतिज्ञा की है, जिनका वह प्रतिनिधित्व करता है (1 कुरिन्थियों 15:23)। निश्चित रूप से हमारे पास यीशु के पुनरुत्थान द्वारा अनन्त जीवन की आशा को हमारे लिए सुदृढ़ और अभिपुष्ट

सुसमाचार क्या है?

किया गया है। परन्तु जब हम उस अद्भुत लाभ के विषय में सोचते हैं—कि हम कब्र से जी उठेंगे—तो हमें धर्मीकरण के साथ पुनरुत्थान के सम्बन्ध को नहीं भूलना चाहिए। हम इस कारण से कब्र से जी उठेंगे क्योंकि कब्र की सामर्थ्य को ख्रीष्ट द्वारा उसके प्रायश्चित में और पूर्ण आज्ञाकारिता के उसके जीवन में हरा दिया गया है। इस सम्बन्ध में, पुनरुत्थान हमारे धर्मीकरण से अलग नहीं किया जा सकता है और इसलिए यह सुसमाचार के लिए आवश्यक है।

प्रेरित पौलुस को उन लोगों को सम्बोधित करना पड़ा जो पुनरुत्थान के बिना मसीहियत का निर्माण करना चाहते थे। वह 1 कुरिन्थियों 15 में पुनरुत्थान के वास्तविक ऐतिहासिक चरित्र का अपना सबसे सक्षम बचाव देता है, जहाँ वह उन लोगों को सम्बोधित करता है जो पुनरुत्थान के बिना मसीहियत को रखने का प्रयास कर रहे थे। पौलुस ने कहा कि यदि पुनरुत्थान नहीं होता है, तो ख्रीष्ट नहीं जिलाया गया, और यदि ख्रीष्ट नहीं जिलाया गया, तो क्या? इस बात के परिणाम क्या हैं? वह इस प्रकल्पना को लेता है कि ख्रीष्ट का पुनरुत्थान नहीं हुआ है और इसे इसके तार्किक, असंगत निष्कर्ष पर ले जाता है। यदि ख्रीष्ट अभी भी मरा हुआ है तो कोई उसे कोई महत्व क्यों दे? जैसा कि पौलुस लिखता है, यदि ख्रीष्ट जिलाया नहीं गया, तो हम अभी भी अपने पापों में हैं। इस स्थिति में, हमारे पास यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि हमें धर्मी ठहराया जा चुका है। हम परमेश्वर के झूठे साक्षी हैं। हम संसार को न केवल यह बता रहे हैं कि यीशु ख्रीष्ट मृतकों में से जी उठा वरन् यह कि स्वयं परमेश्वर ने उसे मृतकों में से जिलाया था। यदि यह सत्य नहीं है, तो

पुनरुत्थान और धर्मिकरण

हमारा उपदेश और हमारा विश्वास व्यर्थ है। और हम सभी लोगों में से सबसे अधिक दया के पात्र हैं। जो लोग मर गए हैं वे नष्ट हो गए हैं, और हमारे पास कब्र से परे कोई आशा नहीं है।

पौलुस कहता है कि मसीहियत को एक ऐसे नैतिक तन्त्र (*ethical system*) में परिवर्तित करने का प्रयास करना मूर्खता है जो पुनरुत्थान की केन्द्रीय पुष्टि की उपेक्षा करता है। उन शताब्दियों में जब यीशु ख्रीष्ट के परमेश्वरत्व को नकार दिया गया था (चौथी, पाँचवीं, उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी), ऐतिहासिक मसीहियत की पुनर्व्याख्या और पुनर्निर्माण करने के लिए बड़े स्तर पर प्रयास किए गए थे, जिससे कि इसमें से पुनरुत्थान को हटाया जा सके। मैं कई वर्षों तक एक ऐसे सेवक के अधीन रहा जो यीशु ख्रीष्ट के वास्तविक ऐतिहासिक पुनरुत्थान पर विश्वास नहीं करता था। उन्होंने इसे प्रतीकात्मक प्रकार का अर्थ देते हुए कहा कि नए नियम के पुनरुत्थान का सन्देश यह है कि हम उठ सकते हैं और साहस के साथ एक नए दिन की सुबह का सामना कर सकते हैं। यह मुझे सुनने में नए नियम की अपेक्षा फ्रेडरिक नीत्शे के जैसे लगा, इसलिए मैंने उनसे कहा: “यदि ख्रीष्ट मरा हुआ है, तो मैं कल सुबह देर तक सोऊँगा। यदि यह झूठी आशा है, तो मैं अपने जीवन के पाँच मिनट और भी मसीही के रूप में नहीं बिताऊँगा।” वास्तव में, यदि पुनरुत्थान सत्य नहीं होता, तो मैं उन लोगों में गिना जाता जो सबसे अधिक दया के पात्र हैं, क्योंकि मैंने अपना जीवन पुनरुत्थित प्रभु के स्थान पर एक मरे हुए स्वामी की सेवा करने के लिए समर्पित कर दिया है।

सुसमाचार क्या है?

बीसवीं शताब्दी में नए नियम की पुनर्व्याख्या करने का प्रयास देखा गया, जिसका अर्थ यह था कि पुनरुत्थान का महत्व एक अस्तित्ववादी अनुभव (*existential experience*) था जो शिष्यों को हुआ था, जिसके अन्तर्गत उन्हें अचानक यह समझ में आया कि यीशु कौन था और उसका उद्देश्य और सन्देश क्या था। नए नियम के सभी वृत्तान्त जिनमें पुनरुत्थित यीशु के प्रकटीकरण सम्मिलित हैं, केवल दृष्टान्त हैं जो यह संकेत देते हैं कि शिष्यों ने यीशु को बौद्धिक समझ के साथ देख लिया; अब उन्हें समझ आ गया कि वह कौन था। उन्हें वास्तव में अपनी आँखों से किसी ऐसे व्यक्ति को देखने का वास्तविक इन्द्रिय अनुभव नहीं हुआ था जो मृतकों में से वापस आ गया था।

जैसा कि हमारा प्रलेख कहता है, यदि आप यीशु ख्रीष्ट के वास्तविक शारीरिक, ऐतिहासिक पुनरुत्थान को नकारते हैं, तो आपने सुसमाचार के मूल-तत्व को नकार दिया है, और आपका जो भी विश्वास है वह उस सुसमाचार पर विश्वास नहीं है जो नए नियम के द्वारा हमारे पास आता है। फिर से, प्रलेख कहता है कि हम हर उस तथाकथित सुसमाचार की वैधता का खण्डन करते हैं जो ख्रीष्ट के शारीरिक पुनरुत्थान की ऐतिहासिक वास्तविकता को अस्वीकार करता है।

इस खण्डन में उपयोग किए गए तीन विशेषणों को स्मरण रखना महत्वपूर्ण है। पहला, पुनरुत्थान ऐतिहासिक है। दूसरा, यह वास्तविक है और तीसरा, यह शारीरिक है। पुष्टिकरण कहता है कि सुसमाचार के केन्द्र में यह दावा है कि नासरत का यीशु वास्तव में मृतकों में से वापस आ गया था और

पुनरुत्थान और धर्मीकरण

कि वह उसी देह में वापस आया था, जिसमें उसकी मृत्यु हुई थी। यह कोई नई देह नहीं थी। यह एक परिवर्तित देह थी। यह एक महिमान्वित देह थी, परन्तु जो देह कब्र में रखी गई थी और जो देह कब्र से बाहर आई थी, उनके बीच निरन्तरता थी। यह एक शारीरिक पुनरुत्थान था। यह एक वास्तविक पुनरुत्थान था जो स्थान और समय में घटित हुआ था।

अब हम अनुच्छेद 11 को देखेंगे, जो धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त पर केन्द्रित है। पुष्टिकरण 11 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि केवल ख्रीष्ट पर केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण का बाइबलीय धर्मसिद्धान्त सुसमाचार के लिए अत्यावश्यक है (रोमियों 3:28; 4:5; गलातियों 2:16)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि कोई भी व्यक्ति बाइबलीय सुसमाचार पर विश्वास कर सकता है और साथ ही केवल ख्रीष्ट पर केवल विश्वास के द्वारा धर्मीकरण की प्रेरितीय शिक्षा को अस्वीकार कर सकता है। हम इस बात का भी खण्डन करते हैं कि एक से अधिक सच्चे सुसमाचार हैं (गलातियों 1:6-9)।

ख्रीष्ट का व्यक्ति और कार्य सुसमाचार के केन्द्र में है। यही कारण है कि इस प्रलेख का अधिकाँश भाग ख्रीष्ट और उसके देहधारण, परमेश्वरत्व,

सुसमाचार क्या है?

प्रायश्चित और पुनरुत्थान के सम्बन्ध में कलीसिया के ऐतिहासिक धर्मसिद्धान्तों की पुनः पुष्टि करता है। परन्तु शुभ समाचार केवल इस विषय में नहीं है कि यीशु कौन हैं और उसने इतिहास में क्या किया; शुभ समाचार में हमारे लिए वे लाभ भी सम्मिलित हैं जो यीशु द्वारा सम्पन्न कार्य से आते हैं—और न केवल लाभ वरन् यह भी कि उन लाभों को कैसे अपना बनाया जाता है। अर्थात्, सुसमाचार यह सन्देश भी है कि हम ख्रीष्ट से कैसे जुड़ते हैं और फिर वह कैसे हमारा उद्धार निष्पादित करता है, वह हमारा उद्धारकर्ता कैसे है।

रोमियों 1 में, प्रेरित पौलुस ने परमेश्वर के सुसमाचार के प्रकाशन की घोषणा की। फिर वह आगे कई अध्यायों में उस सुसमाचार की विषय-वस्तु को व्यक्त करता है। वह हमें धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के केन्द्रीय महत्व पर लाता है, क्योंकि धर्मीकरण उस कार्य का फल है जो ख्रीष्ट ने हमारे लिए पूरा किया है। यह उसके व्यक्ति और उसके कार्य के माध्यम से ही सम्भव हुआ है कि हम परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी ठहराए जाते हैं। यह विचार सुसमाचार का अभिन्न अंग है कि हम विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं न कि अपने द्वारा किए गए व्यवस्था के कार्यों के द्वारा।

धर्मसुधार के समय से कलीसिया अंगीकार करती आई है कि हमारा धर्मीकरण केवल ख्रीष्ट पर केवल विश्वास द्वारा ही है। वास्तव में, *सोला फिडे* शब्द, जो धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के लिए लतीनी संक्षिप्त नाम है, का सीधा सा अर्थ है कि हम केवल विश्वास के द्वारा ही धर्मी ठहराए जाते हैं। केवल विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए जाने का अर्थ है कि हम केवल ख्रीष्ट पर अपना

विश्वास रखकर धर्मी ठहराए जाते हैं। धर्मसुधारकों ने सिखाया कि विश्वास हमारे धर्मिकरण का एकमात्र साधन या साधनात्मक कारण है। विश्वास वह साधन है जिसके द्वारा हम ख्रीष्ट के कार्य का लाभ प्राप्त करते हैं; ख्रीष्ट ने हमारे लिए जो किया वह विश्वास द्वारा प्राप्त होता है।

अनुच्छेद 11 में कहा गया है कि हम इस बात को अस्वीकार करते हैं कि कोई व्यक्ति बाइबल के सुसमाचार पर विश्वास भी कर सकता है और साथ ही केवल ख्रीष्ट पर केवल विश्वास के द्वारा धर्मिकरण की प्रेरितीय शिक्षा को अस्वीकार भी कर सकता है। यह मसीही जगत के इतिहास के सबसे बड़े विवाद की बात करता है, जो सोलहवीं शताब्दी में भड़का और जिसने प्रोटेस्टेंट धर्मसुधार को उकसाया। सोलहवीं शताब्दी में वाद-विवाद सुसमाचार पर केन्द्रित था। जो लोग *सोला फिडे*, या केवल विश्वास द्वारा धर्मिकरण के धर्मसिद्धान्त पर विश्वास करते थे, वे बाइबलीय और प्रेरितीय सुसमाचार के लिए लड़ रहे थे। प्रोटेस्टेंट लोगों और रोमन कैथोलिक कलीसिया के बीच विवाद मूल रूप से इस विषय पर विवाद था कि सुसमाचार क्या है। रोमन कैथोलिक कलीसिया ने *सोला फिडे* अर्थात् केवल विश्वास द्वारा धर्मिकरण को अस्वीकार कर दिया और उसकी भर्त्सना की।

जब पौलुस गलातियों को लिखे अपने पत्र में यहूदीकरण की विधर्मता को सम्बोधित करता है, तो वह लिखता है कि हमें नए नियम में बताए गए सुसमाचार से हटकर किसी भी सुसमाचार को नहीं अपनाना चाहिए (गलातियों 1:6-9)। केवल एक ही सुसमाचार है, और वह एक सुसमाचार हमें बताता

सुसमाचार क्या है?

है कि हम केवल विश्वास के द्वारा ही धर्मी ठहरते हैं। इस खण्डन में कहा गया है कि यदि कोई कहता है कि वह सुसमाचार पर विश्वास करता है, परन्तु साथ ही केवल विश्वास के द्वारा धर्मीकरण को नकारता है, तो वह जिस बात पर विश्वास करता है वह बाइबल का सुसमाचार नहीं है। यह और कुछ भी हो, यह नए नियम का शुभ समाचार नहीं है, और इसे बुरा समाचार ही समझा जाना चाहिए।

ये पुष्टिकरण बाइबल के सुसमाचार के लिए, सच्चे सुसमाचार के लिए अत्यावश्यक हैं, और उनके बिना, हमारे पास सुसमाचार का सारतत्व नहीं है। हमारे समय में भी सोलहवीं शताब्दी के समान धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के विषय में गम्भीर विवाद रहे हैं। उस विवाद का अधिकांश भाग धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के मूल अर्थ के विषय में हमारी अज्ञानता का परिणाम है। इस स्थिति में रहना एक संकटपूर्ण स्थिति है क्योंकि नया नियम केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण को सुसमाचार के साथ अभिन्न रूप से जोड़ता है। यदि हम धर्मीकरण को नहीं समझते हैं, तो हम वास्तव में सुसमाचार को नहीं समझते हैं। और यदि हम सुसमाचार का प्रचार करने जा रहे हैं, तो हमें केवल विश्वास के द्वारा धर्मीकरण का प्रचार करना चाहिए।

अध्याय सात

अभ्यारोपण

Imputation

“यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: एक सुसमाचारवादी उत्सव” प्रलेख में पुष्टिकरण के सभी अनुच्छेदों में से अनुच्छेद 12 सबसे संक्षेप में सुसमाचार के ऐतिहासिक सुसमाचारवादी ईश्वरविज्ञान और रोमन कैथोलिक कलीसिया द्वारा पारम्परिक रूप से व्यक्त किए गए ईश्वरविज्ञान के बीच अन्तर बताता है। पुष्टिकरण 12 में लिखा है:

हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि हमारे पापों का ख्रीष्ट पर और उसकी धार्मिकता का हम पर दोनों के अभ्यारोपण (माने जाने या गिने जाने) का धर्मसिद्धान्त, जिससे हमारे पाप पूरी रीति से क्षमा किए जाते हैं और हमें पूरी रीति से स्वीकार कर लिया जाता है, बाइबल के सुसमाचार के

सुसमाचार क्या है?

लिए अत्यावश्यक है (2 कुरिंथियों 5: 19-21)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि हम ख्रीष्ट की धार्मिकता के अन्तर्वाहित होने के द्वारा धर्मी ठहरते हैं या किसी ऐसी धार्मिकता के द्वारा जिसके विषय में सोचा जाता है कि यह हमारे भीतर उपस्थित है।

मार्टिन लूथर के कार्य के साथ धर्मसुधार प्रारम्भ होने के पश्चात्, परन्तु ट्रेट की महासभा से पहले, जिसमें प्रोटेस्टेंट दृष्टिकोण की रोमन कैथोलिक कलीसिया द्वारा अत्यधिक भर्त्सना की गई थी, इन दलों को एक साथ लाने का प्रयास किया गया था। धर्मसुधार समूह के प्रतिनिधि और रोमन कैथोलिक कलीसिया के प्रतिनिधि जर्मनी के रेगेन्सबर्ग में मिले। उन्होंने दोनों पक्षों के बीच समझौता और मेलमिलाप कराने का प्रयास किया। और थोड़े समय के लिए, यह सफल होता दिख रहा था—जब तक यह असफल हो गया।

जिस बिन्दु पर दोनों पक्ष किसी सहमति पर नहीं पहुँच पाए, उसका सम्बन्ध धर्मीकरण के अन्तिम आधार के प्रश्न से था। परमेश्वर किस आधार पर किसी व्यक्ति को अपनी दृष्टि में धर्मी घोषित करेगा? विवाद का ध्यान दो शब्दों पर केन्द्रित था। पहला शब्द था *अभ्यारोपण*, जो सुसमाचारवादियों का प्रिय शब्द था। रोमन कैथोलिक कलीसिया ने *अन्तर्वाह* शब्द पर बल दिया।

इससे पहले कि हम भिन्नता पर विचार करें, हमें यह समझने की आवश्यकता है कि दोनों पक्षों का मानना था कि एक अर्थ में हम ख्रीष्ट की धार्मिकता के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं। परन्तु महत्वपूर्ण प्रश्न यह बन गया कि हम किस अर्थ में ख्रीष्ट की धार्मिकता के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं? किस प्रकार या ढंग से ख्रीष्ट की धार्मिकता हमारे धर्मीकरण के लिए उपयोगी होती है? भिन्नता को समझने के लिए, आइए पहले रोमन कैथोलिक दृष्टिकोण पर संक्षेप में दृष्टि करें।

रोमन कैथोलिक कलीसिया के अनुसार धर्मीकरण का आरम्भ बपतिस्मा से होता है। उस कलीसिया के अनुसार बपतिस्मा एक माध्यम या साधन है, जिसके द्वारा प्रारम्भ में धर्मीकरण होता है। रोमन कैथोलिक कलीसिया का मानना है कि बपतिस्मा के समय ख्रीष्ट की धार्मिकता प्राण में *अन्तर्वाहित* की जाती है। अन्तर्वाह से उनका तात्पर्य यह है कि धर्मी ठहराने वाला अनुग्रह विश्वासी के प्राण में उण्डेल दिया जाता है, जो कि ख्रीष्ट की धार्मिकता का अनुग्रह है। फिर जिस व्यक्ति को अनुग्रह का यह अन्तर्वाह प्राप्त होता है, उसे उस अनुग्रह के साथ सहयोग करना चाहिए और उसे स्वीकार करना चाहिए। ट्रेंट की महासभा के अनुसार, जब वास्तविक धार्मिकता विश्वासी के भीतर निहित हो जाती है और वह धार्मिकता व्यक्ति के भीतर निहित होती है, तभी परमेश्वर उस व्यक्ति को अपनी दृष्टि में धर्मी घोषित करेगा।

जब कोई व्यक्ति धर्मीकरण का अनुग्रह प्राप्त करता है और उसके साथ सहयोग करता है और उसको स्वीकृति देता है, तब उस व्यक्ति को उद्धार

सुसमाचार क्या है?

की अवस्था में रख दिया जाता है, और वह तब तक वहीं रहता है जब तक कि वह कोई प्राण-घातक पाप नहीं करता है। प्राण-घातक पाप को घातक इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह प्राण में निहित और अन्तर्वाहित अनुग्रह को नष्ट कर देता है। एक बार जब वह अनुग्रह नष्ट हो जाता है, तो व्यक्ति को फिर से धर्मी ठहराया जाना पड़ता है, और पुनः धर्मीकरण कायाक्लेश (*penance*) संस्कार के माध्यम से होता है। रोमन कैथोलिक कलीसिया कायाक्लेश के संस्कार को उन लोगों के लिए धर्मीकरण के दूसरे आधार के रूप में परिभाषित करती है, जिन्होंने अपने प्राणों को विनाश के संकट में डाल दिया है। उद्धार खो चुका है, और इसे पुनर्स्थापित करने का एकमात्र उपाय अनुग्रह का नया अन्तर्वाह है, जो अब कायाक्लेश के संस्कार के माध्यम से आता है। वे कायाक्लेश के संस्कार से सम्बन्धित विषय थे, विशेष रूप से पाप विमोचन पत्रों (*indulgences*) की समस्या, जिन्होंने सबसे पहले लूथर के साथ विवाद को जन्म दिया।

रोमन कैथोलिक कलीसिया के विपरीत धर्मसुधारकों ने सिखाया कि हमारा धर्मीकरण अन्तर्वाह के द्वारा नहीं वरन् अभ्यारोपण के द्वारा होता है। अभ्यारोपण का सम्बन्ध परमेश्वर की वैधानिक उद्घोषणा या न्यायिक निर्णय से है, जिसके द्वारा वह एक व्यक्ति के लेखे-जोखे को दूसरे के नाम कर देता है या उसके लेखे में डाल देता है। धर्मीकरण में अभ्यारोपण एक द्विमार्गीय पथ है; यह दोनों दिशाओं में जाता है। सबसे पहले, ख्रीष्ट क्रूस पर हमारे पापों का दण्ड अपने ऊपर लेता है। प्रायश्चित्त में, ख्रीष्ट पाप वाहक है। वह पाप वाहक

अभ्यारोपण

बन जाता है जब परमेश्वर हमारे अपराध को हमसे उस पर स्थानान्तरित कर देता है। ख्रीष्ट पुराने नियम के प्रायश्चित दिवस के संस्कार को पूरा करता है। प्रायश्चित के दिन महायाजक प्रतीकात्मक रूप से प्रायश्चित के बकरे के सिर पर अपना हाथ रखता था। यह लोगों के पापों को बकरे पर स्थानान्तरित करने या अभ्यारोपित करने का प्रतीक था। पाप और दोष बकरे पर स्थानान्तरित करने के पश्चात् बकरे को जंगल में, बाहरी अन्धेरे में निकाल दिया जाता था। अभ्यारोपण का विचार पुराने नियम की बलि प्रणाली में गहराई से निहित है, और क्रूस पर हमारे पापों को परमेश्वर की न्यायिक या वैधानिक घोषणा द्वारा ख्रीष्ट पर स्थानान्तरित कर दिया जाता है।

परन्तु यह हमारे धर्मीकरण का केवल आधा भाग है। ख्रीष्ट द्वारा हमारे अपराध के लिए भुगतान करने के पश्चात् हम निर्दोषता की अवस्था में तो हो सकते हैं, परन्तु हमारे पास कोई धार्मिकता या कोई विशेष योग्यता नहीं है, और परमेश्वर धर्मीकरण के कार्य में यह देखना चाहता है कि उसकी धार्मिकता की व्यवस्था हममें पूरी हुई है। ख्रीष्ट, जैसा कि हमने कहा है, न केवल अपने लोगों के लिए मरा, वरन् वह हमारे लिए जिया भी। हमारा छुटकारा केवल ख्रीष्ट की मृत्यु के द्वारा पूरा नहीं हुआ—भले ही यह हमारे उद्धार के लिए अपरिहार्य और निर्णायक थी। फिर से, ऐसा नहीं हुआ कि यीशु शुभ शुक्रवार के दिन स्वर्ग से आया, क्रूस पर चढ़ गया और फिर स्वर्ग लौट गया। उसका जन्म एक शिशु के रूप में हुआ था, और वह उसके जन्म के क्षण से ही परमेश्वर की सम्पूर्ण व्यवस्था के अधीन कर दिया गया था। उसका सम्पूर्ण जीवन हर

सुसमाचार क्या है?

एक बिन्दु पर परमेश्वर की व्यवस्था को पूरा करने के लिए बीता, और इस प्रकार उसने अपनी सिद्ध धार्मिकता के द्वारा परमेश्वर की आशीष उपार्जित कर ली या उसके योग्य बन गया। फिर से, हमारे धर्मीकरण में दोहरा अभ्यारोपण है। एक ओर, हमारा दोष ख्रीष्ट पर अभ्यारोपित या स्थानान्तरित कर दिया जाता है, और दूसरी ओर, उसकी धार्मिकता हम पर अभ्यारोपित कर दी जाती है।

रोम के लिए, धर्मीकरण का साधक कारण (*instrumental cause*) पहले बपतिस्मा है और फिर उसके पश्चात् में कायाक्लेश का संस्कार है। धर्मसुधारकों के लिए, धर्मीकरण का साधक कारण विश्वास है। यह वह साधन है जिसके द्वारा हम ख्रीष्ट को प्राप्त करते हैं और जिसके द्वारा ख्रीष्ट की योग्यता विश्वासी को सौंप दी जाती है, जिससे कि उन सभी के पास जो ख्रीष्ट पर अपना विश्वास रखते हैं, ख्रीष्ट की धार्मिकता को फिर उनके लेखे में गिना जाता या स्थानान्तरित किया जाता है। रोमन कैथोलिक कलीसिया ने अभ्यारोपण की इस अवधारणा को यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि उनके अनुसार इसमें वैधानिक कल्पना सम्मिलित होगा। अर्थात्, यदि परमेश्वर ने कोई वैधानिक घोषणा की है जिसके द्वारा वह एक व्यक्ति की धार्मिकता को किसी और को स्थानान्तरित करने जा रहा है, तो यह काल्पनिक बात होगी। यह परमेश्वर को एक झूठ में भागी कर देगा, क्योंकि यह सत्य पर आधारित नहीं होगा। रोम पूछ रहा था, एक न्यायी और पवित्र परमेश्वर किसी ऐसे व्यक्ति को धर्मी कैसे मान सकता है या गिन सकता है जो वास्तव में धर्मी नहीं है? वह किसी को धर्मी

अभ्यारोपण

कैसे घोषित कर सकता है जब वह व्यक्ति अपने आप में और अपने से धर्मी नहीं है? रोम ने इसे परमेश्वर की सत्यनिष्ठा पर छाया डालने और उसकी अपनी धार्मिकता से किसी प्रकार का समझौता करने के रूप में देखा।

धर्मसुधारकों ने यह कहते हुए उत्तर दिया कि यह निश्चित रूप से एक वैधानिक कार्य है, परन्तु इसमें कुछ भी काल्पनिक नहीं है। सबसे पहले, विश्वास के द्वारा जो धार्मिकता हम पर अभ्यारोपित की जाती है वह वास्तविक धार्मिकता है। यह ख्रीष्ट की धार्मिकता है, और उसकी धार्मिकता के विषय में कुछ भी काल्पनिक नहीं है। दूसरा, जब परमेश्वर एक व्यक्ति के लेखे से दूसरे व्यक्ति के लेखे में कुछ स्थानान्तरित करता है, तो यह वास्तविक स्थानान्तरण होता है। यह उन लोगों के लिए वास्तविक धार्मिकता का वास्तविक अभ्यारोपण है जिनके पास वास्तविक विश्वास है। मैं यह जोड़ना चाहूँगा कि यदि हम सिद्धान्त के रूप में अभ्यारोपण के विचार पर आपत्ति करते हैं, तो न केवल हमें अपने लेखे में ख्रीष्ट की धार्मिकता के स्थानान्तरण को अस्वीकार करना होगा, वरन् हमें क्रूस को भी अस्वीकार करना होगा, क्योंकि स्पष्ट रूप से क्रूस पर ख्रीष्ट हमारे प्रतिस्थापन के रूप में मर रहा है। परमेश्वर अपना क्रोध हम पर नहीं वरन् उस पर उण्डेल रहा है क्योंकि परमेश्वर ने अभ्यारोपण के द्वारा हमारे अपराध को ख्रीष्ट पर स्थानान्तरित कर दिया है।

केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण सुसमाचार के लिए अत्यावश्यक है। सोला फिडे के बिना, आपके पास सुसमाचार नहीं है। और अभ्यारोपण की अवधारणा केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के लिए सर्वथा

कलीसिया क्या है?

आवश्यक है। इसलिए यदि आपके पास अभ्यारोपण नहीं है, तो आपके पास सोला फिडे भी नहीं है। और यदि आपके पास सोला फिडे नहीं है, तो आपके पास सुसमाचार नहीं है। अभ्यारोपण के इस धर्मसिद्धान्त के बिना आपके पास सुसमाचार नहीं है, क्योंकि सुसमाचार यीशु की धार्मिकता को हमारे लेखों में स्थानान्तरित करने के इसी विचार पर खड़ा होता है या गिर जाता है।

हम प्रायः अपने दैनिक जीवन और व्यावहारिक जीवन के लिए इनमें से कुछ धर्मसिद्धान्तों के महत्व के विषय में सोचते हैं। हमारे जीवन के लिए यह जानने से अधिक प्रासंगिक कुछ भी नहीं है कि हम पवित्र और न्यायपूर्ण परमेश्वर के साथ एक उद्धारक सम्बन्ध में कैसे आ सकते हैं। यदि हमारा छुटकारा किसी भी सीमा तक हमारी अपनी धार्मिकता पर निर्भर होता, तो हमारे पास उद्धार की कोई आशा नहीं होती, क्योंकि ख्रीष्ट द्वारा प्राप्त की गई वह एकमात्र धार्मिकता है जो उस मानक को पूरा कर सकती है जिसे परमेश्वर ने अपने प्राणियों पर ठहराया है। यही सत्य है जिसे हम सुसमाचार में सुनते हैं, और यही वह सत्य है जिससे हम लिपटे रहते हैं।

अध्याय आठ

ख्रीष्ट की धार्मिकता

The Righteousness of Christ

अनुच्छेद 12 ने हमें दिखाया कि हमारा धर्मीकरण ख्रीष्ट की धार्मिकता के अभ्यारोपण पर आधारित है, और यह हमारे भीतर निहित किसी भी धार्मिकता में नहीं पाया जाता है। प्रथम दृष्टया ऐसा लग सकता है कि अनुच्छेद 13 केवल अनुच्छेद 12 में पुष्टि की गई बातों की नकल करता है। परन्तु अभ्यारोपण का विषय और हमारे धर्मीकरण में ख्रीष्ट की भूमिका सुसमाचार की हमारी समझ के लिए इतनी केन्द्रीय है कि जिस प्रलेख का हम अध्ययन कर रहे हैं उसके निर्माताओं को लगा कि अनुच्छेद 13 में इसे और भी अधिक सटीक होना आवश्यक है। पुष्टिकरण 13 में लिखा है:

हम इस बात की पुष्टि करते हैं कि ख्रीष्ट की धार्मिकता जिसके द्वारा हम धर्मी ठहरते हैं, वह सही रूप में उसकी अपनी है, जिसे उसने हमसे

सुसमाचार क्या है?

अलग अपनी पूर्ण आज्ञाकारिता के द्वारा प्राप्त किया है। इस धार्मिकता को हमारे धर्मीकरण के एकमात्र आधार के रूप में परमेश्वर की न्यायिक (अर्थात वैधानिक) घोषणा द्वारा हमारे लिए गिना जाता है, माना जाता है, या अभ्यारोपित किया जाता है।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि हमारे अस्तित्व के किसी भी चरण में हम जो भी कार्य करते हैं, वे ख्रीष्ट की योग्यता में कुछ जोड़ते हैं या हमारे लिए कोई योग्यता उपार्जित करते हैं जो किसी भी प्रकार से हमारे धर्मीकरण के आधार में योगदान देती है (गलातियों 2:16; इफिसियों 2:8-9 ; तीतुस 3:5)।

जब हम ख्रीष्ट की धार्मिकता के विषय में बात करते हैं, तो हमारा तात्पर्य उस धार्मिकता से है, जिसे ख्रीष्ट ने अपनी पूर्ण आज्ञाकारिता से प्राप्त किया था। ऐतिहासिक रूप से, ईश्वरविज्ञानियों ने ख्रीष्ट की आज्ञाकारिता के दो प्रकारों के बीच अन्तर किया है। एक को ख्रीष्ट की निष्क्रिय वाली आज्ञाकारिता कहा जाता है, और दूसरी को उसकी सिद्ध सक्रिय आज्ञाकारिता कहा जाता है। ये शब्द इस प्रलेख में उपयोग नहीं किए गए हैं, परन्तु निश्चित रूप से वे सतह से थोड़ा ही नीचे हैं और इस कथन के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि बनाते हैं।

ख्रीष्ट की निष्क्रिय आज्ञाकारिता उसके जीवन भर व्यवस्था के दण्ड को भुगतने को सन्दर्भित करती है, जिसकी परिणति क्रूस पर उसकी मृत्यु में

ख्रीष्ट की धार्मिकता

हुई। उसने हमारे स्थान पर परमेश्वर के न्याय को भुगतने के लिए परमेश्वर की बुलाहट को स्वीकार किया। ख्रीष्ट की सिद्ध सक्रिय आज्ञाकारिता उसके द्वारा व्यवस्था का पालन किए जाने और अपने जीवन भर उसकी माँगों को सिद्ध रूप से पूरा करने को सन्दर्भित करती है। उसने हर बिन्दु पर और हर छोटी से छोटी बात में परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति पूर्ण आज्ञाकारिता प्रदर्शित की।

जब लूथर ने उस धार्मिकता के विषय में बात की जिसके द्वारा हम धर्मी ठहराए जाते हैं, तो उसने दो सहायक वाक्यांशों का उपयोग किया। पहला है *जस्टिशिया एलियनम (justitia alienum)*, जिसका अर्थ है बाह्य या पराई धार्मिकता। *जस्टिशिया एलियनम* उस धार्मिकता को सन्दर्भित करता है जो दूसरे द्वारा प्राप्त की गई हो। यह किसी और की धार्मिकता है, हमारी अपनी नहीं। जिस धार्मिकता के द्वारा हम धर्मी ठहराए गए थे, वह ख्रीष्ट की वह धार्मिकता है जो सही रूप में उसकी अपनी है। यह सही रूप में हमारी अपनी नहीं है। हम इसे केवल अभ्यारोपण द्वारा ही प्राप्त करते हैं।

लूथर द्वारा प्रयुक्त दूसरा वाक्यांश *एक्स्ट्रा नोस (extra nos)* था, जिसका अर्थ है हमसे बाहर या हमसे अलग। फिर से, जो धार्मिकता हमारे धर्मीकरण का आधार है वह वह धार्मिकता नहीं है जो हममें पाई जाती है, वरन् यह वह धार्मिकता है जो ख्रीष्ट द्वारा हमारे लिए प्राप्त की गई है। इस धार्मिकता को हमारे धर्मीकरण के एकमात्र आधार के रूप में परमेश्वर की वैधानिक घोषणा द्वारा हमारे लेखे में गिना, माना या अभ्यारोपित किया जाता है।

सुसमाचार क्या है?

अनुच्छेद 13 इस बात का खण्डन करता है कि हमारे अस्तित्व के किसी भी चरण में हम जो भी कार्य करते हैं वे ख्रीष्ट की योग्यता में कुछ जोड़ते हैं या हमारे लिए कोई योग्यता उपार्जित करते हैं, जो किसी भी प्रकार से हमारे धर्मीकरण के आधार में योगदान देती है। यहाँ योग्यता की रोमन कैथोलिक अवधारणा दृष्टि में है। योग्यता रोम के कायाक्लेश (*penance*) के संस्कार के अभ्यास में परिलक्षित होती है, जो, जैसा कि हमें स्मरण है, उन लोगों के लिए धर्मीकरण की अवस्था में पुनर्स्थापना के लिए आवश्यक है, जिन्होंने घातक पाप किया है। कायाक्लेश के संस्कार के विभिन्न भागों से होकर जाने के पश्चात् ही उन्हें धर्मीकरण की अवस्था में पुनर्स्थापित किया जाता है, जिसमें पाप का अंगीकार, (दण्ड के भय से जनित) पश्चाताप का कार्य, याजकीय दोष-निवारण और सन्तुष्टि के कार्य करना जैसी बातें सम्मिलित हैं। परन्तु एकमात्र योग्यता जो हमारे धर्मीकरण के लिए मान्य है वह ख्रीष्ट की योग्यता है, और वह योग्यता सिद्ध है, इसलिए यह बढ़ाए जाने या कम किए जाने में असमर्थ है। हम सिद्धता में कुछ नहीं जोड़ सकते। हम परमेश्वर की धार्मिकता की उन माँगों को पूरा करने के लिए कोई योग्यता वाला योगदान नहीं कर सकते हैं, जो यीशु द्वारा अपनी सिद्ध आज्ञाकारिता में पहले से ही प्राप्त नहीं कर लिया गया है।

अब हम एक कठिन अंश पर आते हैं। हमारा प्रलेख, जिन्हें हम धर्मीकरण और पवित्रीकरण कहते हैं, उन के बीच अन्तर करता है। पुष्टिकरण 14 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि, जबकि सभी विश्वासियों में पवित्र आत्मा का वास

ख्रीष्ट की धार्मिकता

होता है और वे पवित्र बनाए जाने और ख्रीष्ट के स्वरूप में ढाले जाने की प्रक्रिया में हैं, धर्मीकरण के वे परिणाम इसका आधार नहीं हैं। परमेश्वर हमें धर्मी घोषित करता है, हमारे पापों को क्षमा करता है, और हमें अपनी सन्तान के रूप में गोद ले लेता है, केवल उसके अनुग्रह के द्वारा, और केवल विश्वास के माध्यम से, केवल ख्रीष्ट के कारण, जबकि हम अभी पापी ही हैं (रोमियों 4:5)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि इससे पहले कि परमेश्वर उन्हें ख्रीष्ट में धर्मी घोषित करे विश्वासियों को परमेश्वर के जीवन-परिवर्तनकारी अनुग्रह के साथ उनके सहयोग के माध्यम से अन्तर्निहित रूप से धर्मी होने की आवश्यकता है। जब हम पापी ही होते हैं, तभी हमें धर्मी ठहराया जाता है।

हमें परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी घोषित किया गया है जबकि हम अभी भी पापी हैं। या, जैसा कि लूथर ने कहा, हम *सिमुल इयुस्टिस एट पेक्केटोर*, अर्थात् एक ही समय में धर्मी और पापी हैं। उनका तात्पर्य यह था कि जब कोई व्यक्ति ख्रीष्ट पर अपना विश्वास रखता है, तो परमेश्वर उसे ख्रीष्ट की धार्मिकता के अभ्यारोपण के द्वारा धर्मी घोषित कर देता है। परन्तु हमारा धर्मीकरण हमारे पापी स्वभाव को तुरन्त नष्ट नहीं कर देता है; हम धर्मी ठहराए जा चुके हैं, परन्तु हम पाप करना जारी रखते हैं। तथापि, जो कोई भी धर्मी ठहराया जाता

सुसमाचार क्या है?

है, उसमें परमेश्वर पवित्र आत्मा का भी वास होता है, और धर्मीकरण के क्षण से पवित्र आत्मा विश्वासी का प्राण और जीवन में पवित्रीकरण का अपना कार्य प्रारम्भ कर देता है। इसलिए, यद्यपि हमें परमेश्वर के द्वारा धर्मी घोषित होने के लिए तब तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं होती है जब तक कि हम धर्मी न बन जाएँ, तथापि हम धर्मी बन रहे हैं। ख्रीष्ट के स्वरूप में ढलने और ख्रीष्ट की पूर्णता में बढ़ने की यह प्रक्रिया हमारे आत्मिक नए जन्म और हमारे धर्मीकरण के साथ आरम्भ हो जाती है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि हमारा प्रलेख इस बात का खण्डन नहीं करता है कि मसीहियों को अच्छे कार्यों के विषय में चिन्तित होना चाहिए। प्रेरित याकूब ने लिखा: “हे मेरे भाइयों यदि कोई कहे कि मैं विश्वास करता हूँ, पर कर्म न करें, तो इससे क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास उसका उद्धार कर सकता है?” (याकूब 2:14)। बात यह है कि हमारे अच्छे कार्य हमारे धर्मीकरण से निकलते हैं और हमारे धर्मीकरण का कारण या आधार नहीं हैं। केवल वे अच्छे कार्य हमारे धर्मीकरण में योगदान देते हैं जो यीशु के अच्छे कार्य हैं। हमारे अच्छे कार्य धर्मीकरण के पश्चात् उस धर्मीकरण के परिणामस्वरूप आते हैं। फिर से, प्रलेख पुष्टि करता है कि सभी विश्वासियों में पवित्र आत्मा का वास है और वे ख्रीष्ट के स्वरूप में ढाले जाने की प्रक्रिया में हैं। हमें ख्रीष्ट की समानता में बढ़ते जाना है।

महत्वपूर्ण रूप से, अनुच्छेद 14 इस बात का खण्डन करता है कि “इससे पहले कि परमेश्वर उन्हें ख्रीष्ट में धर्मी घोषित करे विश्वासियों को परमेश्वर के

ख्रीष्ट की धार्मिकता

जीवन-परिवर्तनकारी अनुग्रह के साथ उनके सहयोग के माध्यम से अन्तर्निहित रूप से धर्मी होने की आवश्यकता है। जब हम पापी ही होते हैं, तभी हमें धर्मी ठहराया जाता है।” यहाँ मुख्य शब्द “पहले” है। रोम और सुसमाचारवादी दोनों का मानना है कि धर्मीकरण में वैधानिक घोषणा सम्मिलित है। धर्मीकरण तब होता है जब परमेश्वर एक वैधानिक निर्णय देता है, जिसमें वह घोषणा करता है कि व्यक्ति उसकी दृष्टि में धर्मी है। दोनों पक्ष इस बात को मानते हैं। विवाद इस बात पर है कि परमेश्वर कब और किस आधार पर ऐसी घोषणा करता है। धर्मसुधारकों ने इस बात पर बल दिया कि परमेश्वर हमारे अन्दर अन्तर्निहित धार्मिकता होने से पहले ही यह घोषणा कर देता है। वह उस क्षण यह घोषणा करता है जब हम विश्वास करते हैं, तब जब हम पापी ही होते हैं। यह अच्छे समाचार का अच्छा भाग है। हमारे पापों को क्षमा किया जा सकता है, हमें परमेश्वर के परिवार में अपनाया जा सकता है, और जिस क्षण हम यीशु को ग्रहण करते हैं, उसी क्षण हमारे सृष्टिकर्ता द्वारा हमें धर्मी घोषित किया जा सकता है, क्योंकि उस क्षण वह सब जो यीशु है और जो कुछ उसने प्राप्त किया है वह हमारा हो जाता है।

नया नियम हमें “डरते और काँपते हुए [अपने] उद्धार का कार्य करने” के लिए बुलाता है (फिलिप्पियों 2:12)। कभी-कभी हम उस भाषा को पढ़ते समय भ्रमित हो जाते हैं क्योंकि धर्मीकरण और उद्धार शब्दों का उपयोग परस्पर एक दुसरे के लिए किया जाता है। यह सत्य है कि जिस क्षण हम ख्रीष्ट

सुसमाचार क्या है?

पर विश्वास करते हैं, उसी क्षण एक निश्चित अर्थ में हम उद्धार में प्रवेश कर लेते हैं। परन्तु हमारा अन्तिम और पूर्ण उद्धार तब तक नहीं होता जब तक हम स्वर्ग में अपनी महिमा में प्रवेश नहीं कर लेते। तो, उद्धार की प्रक्रिया का एक भाग पवित्रीकरण है। परन्तु धर्मीकरण पहले आता है। हम अपना धर्मीकरण प्राप्त करने के लिए कार्य नहीं कर रहे हैं। हम उस धर्मीकरण के फल को अपने पवित्रीकरण में उत्पन्न करने के लिए कार्य कर रहे हैं।

अध्याय नौ

जीवन-परिवर्तनकारी सुसमाचार

A Life-Changing Gospel

जिस क्षण हम सच्चे विश्वास के साथ ख्रीष्ट को ग्रहण करते हैं, परमेश्वर ख्रीष्ट की धार्मिकता के अभ्यारोपण के द्वारा हमें धर्मी घोषित कर देता है। परन्तु यद्यपि हम धर्मी ठहराए जा चुके हैं, फिर भी हम पाप करना जारी रखते हैं। वह आजीवन प्रक्रिया जिसके द्वारा हमें पवित्र बनाया जाता है और ख्रीष्ट के स्वरूप में ढाला जाता है, जो हमारे धर्मीकरण के क्षण से प्रारम्भ होती है, *पवित्रीकरण* कहलाती है। अनुच्छेद 15 धर्मीकरण और पवित्रीकरण के बीच के सम्बन्ध को सम्बोधित करता है। पुष्टिकरण 15 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि उद्धारक विश्वास का परिणाम पवित्रीकरण, अर्थात् पवित्र आत्मा की सामर्थ्य के माध्यम से ख्रीष्ट की समानता में बढ़ने के द्वारा

सुसमाचार क्या है?

जीवन का परिवर्तन होता है। पवित्रीकरण का अर्थ है निरन्तर पश्चाताप, पाप से फिरकर यीशु ख्रीष्ट की सेवा करने के लिए अपने प्रभु और स्वामी के रूप में उस पर कृतज्ञतापूर्ण निर्भरता का जीवन (गलातियों 5:22-25; रोमियों 8:4, 13-14)।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम धर्मीकरण के हर उस दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हैं, जो इसे ख्रीष्ट के साथ हमारी पवित्र करने वाली एकता से और प्रार्थना, पश्चाताप, क्रूस उठा कर चलने और आत्मा में जीवन के माध्यम से उसके स्वरूप में बढ़ने से अलग करता है।

जैसा कि हमने अध्याय 8 में उल्लेख किया है, मार्टिन लूथर ने कहा था कि धर्मी ठहराया हुआ पापी एक ही समय में धर्मी और पापी होता है। वह केवल ख्रीष्ट की धार्मिकता के उसके लेखे में स्थानान्तरित होने के कारण धर्मी है, परन्तु अपने आप में वह एक पापी ही रहता है। जिस क्षण हम ख्रीष्ट पर विश्वास करते हैं, हम तुरन्त पाप करने के रोग से ठीक नहीं हो जाते हैं। लूथर ने कहा कि जब परमेश्वर किसी व्यक्ति को धर्मी घोषित कर देता है, तो यह ऐसा है जैसे उसने औषधि की माला दे दी है, जिससे रोगी ठीक हो जाएगा। परन्तु उपचार में समय लगता है। अर्थात्, हमारे पाप का उपचार हमारे पवित्रीकरण में पाया जाता है, और पवित्रीकरण एक आजीवन प्रक्रिया है जो तब तक पूरी नहीं होती जब तक हम मर नहीं जाते और बाइबल जिसे *महिमान्विकरण*

कहती है उसमें प्रवेश नहीं कर जाते। महिमान्विकरण पवित्रीकरण की लम्बी प्रक्रिया का समापन है।

जिस प्रलेख का हम अध्ययन कर रहे हैं, वह पवित्रीकरण को धर्मीकरण के एक आवश्यक परिणाम या फल के रूप में देखता है। यह कोई सम्भावित परिणाम नहीं वरन् एक निश्चित परिणाम है। और यह बात महत्वपूर्ण है क्योंकि कुछ लोगों का मानना है कि ऐसा सम्भव है कि किसी व्यक्ति को धर्मी ठहरा दिया जाए और कभी भी उसके पवित्रीकरण की प्रक्रिया आरम्भ ही न हो, कि लोग जीवन भर वह बने रह सकते हैं जिसे “शारीरिक मसीही” कहा जाता है। मैं सोचता हूँ कि यह विश्वास उस समस्या से उत्पन्न होता है जिसे हम बहुधा देखते हैं कि लोग किसी प्रकार के सुसमाचारवादी प्रचार की प्रतिक्रिया के रूप में ख्रीष्ट में विश्वास का अंगीकार कर लेते हैं, परन्तु फिर अपने जीवन में कोई बाहरी स्पष्ट परिवर्तन नहीं दिखाते हैं। कुछ लोग आशावादी होना चाहते हैं और विश्वास के अंगीकार पर भरोसा करना चाहते हैं, इसलिए वे इस विचार को सोचते हैं कि वे वास्तव में मसीही हैं, परन्तु अभी तक उनका पवित्रीकरण आरम्भ नहीं हुआ है। परन्तु ऐतिहासिक, बाइबल आधारित मसीहियत फिर से कहती है कि एक बार जब कोई व्यक्ति धर्मी ठहरा दिया जाता है, तो वह पवित्र होना आरम्भ कर देता है।

निश्चित रूप से, जिस व्यक्ति को धर्मी ठहराया जा चुका है, उसने एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का अनुभव किया है, किसी ऐसे व्यक्ति से जो परमेश्वर के शाप के अधीन है से एक ऐसे व्यक्ति में परिवर्तन जो उसकी दृष्टि में धर्मी

सुसमाचार क्या है?

है। सच्चा विश्वास रखे बिना किसी व्यक्ति को धर्मी नहीं ठहराया जा सकता। परन्तु मसीही लोग इस बात पर असहमत हैं कि पुनरुज्जीवन या नए जीवन के सम्बन्ध में विश्वास कब किया जाता है। पुनरुज्जीवन पवित्र आत्मा के कार्य को सन्दर्भित करता है जिसके द्वारा एक व्यक्ति को आत्मिक मृत्यु की अवस्था से पुनरुज्जीवित किया जाता है और आत्मिक जीवन की अवस्था में परिवर्तित कर दिया जाता है। कुछ लोगों का मानना है कि व्यक्ति पहले विश्वास करता और फिर उस विश्वास के तत्काल परिणाम के रूप में वह न केवल धर्मी ठहराया जाता है वरन् पुनरुज्जीवित भी होता है। इसका अर्थ दो महत्वपूर्ण परिवर्तन होंगे जो धर्माकरण से सम्बन्ध रखते हैं। जैसे ही कोई व्यक्ति विश्वास करता है, वह अविश्वासी के स्थान पर विश्वासी बन जाता है, और अब वह अपुनरुज्जीवित होने के स्थान पर पुनरुज्जीवित हो जाता है।

धर्मसुधार का मत विश्वास और पुनरुज्जीवन के इन दोनों तत्वों के क्रम को उलट देता है। हम कहते हैं कि पुनरुज्जीवन विश्वास से पहले होता है। जब हम कहते हैं कि पहले होता है, तो हमारा अर्थ कालानुक्रमिकता से नहीं है; हमारा अर्थ यह नहीं है कि कोई व्यक्ति पुनरुज्जीवित हो जाता है और फिर पन्द्रह वर्ष बाद वह विश्वास करता है, या कोई व्यक्ति पुनरुज्जीवित हो जाता है और पाँच मिनट पश्चात् विश्वास करता है। हम एक साथ होने वाली क्रियाओं के विषय में बात कर रहे हैं। परन्तु जब हम इसे तार्किक क्रम के सन्दर्भ में देखते हैं, तो हम कहते हैं कि पुनरुज्जीवन विश्वास से पहले आता है, इस अर्थ में कि पुनरुज्जीवन विश्वास की उपस्थिति के लिए एक आवश्यक माँग

या पूर्वापेक्षा है। धर्मसुधारवादी ईश्वरविज्ञान सिखाता है कि किसी व्यक्ति के जीवन में सच्चा विश्वास प्रकट होने का एकमात्र उपाय यह है कि परमेश्वर पहले पवित्र आत्मा की संक्रिया (*operation*) के माध्यम से उसके प्राण में अनुग्रह का कार्य करे, जिसके द्वारा वह आत्मिक मृत्यु से आत्मिक जीवन में जीवित या त्वरित होता है और इस प्रकार से पुनरुज्जीवित हो जाता है। जैसा कि यीशु ने निकुदेमुस से कहा था, “जब तक कोई नया जन्म न ले वह परमेश्वर का राज्य नहीं देख सकता” (यूहन्ना 3:3)।

जिस व्यक्ति के पास सच्चा विश्वास है वह एक पुनरुज्जीवित व्यक्ति भी है, एक ऐसा व्यक्ति जिसका नया जन्म हुआ है। और इसीलिए हम देखते हैं कि पवित्रीकरण को धर्मीकरण के पश्चात् ही आना है: यदि विश्वास उपस्थित है और व्यक्ति पुनरुज्जीवित हुआ है, तो इसका अर्थ है कि पवित्र आत्मा की संक्रिया के माध्यम से उस व्यक्ति को उसके आन्तरिक अस्तित्व में परिवर्तित कर दिया गया है, और पवित्रीकरण की प्रक्रिया, या ख्रीष्ट के स्वरूप में ढलना निश्चित रूप से आरम्भ हो गया है।

पवित्रीकरण में निरन्तर पश्चाताप सम्मिलित है। कुछ मसीही सोचते हैं कि मसीही को केवल मसीही जीवन के आरम्भ में ही पश्चाताप करने के लिए बुलाया जाता है। सुसमाचार के प्रति हमारी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया तब होती है, जब हम परमेश्वर के सामने अपने पापों का अंगीकार करते हैं और हृदय और मन के परिवर्तन का अनुभव करते हैं, और हम उसे पश्चाताप कहते हैं। परन्तु यहाँ हमारा प्रलेख मानता है कि पश्चाताप एक आजीवन अभ्यास है। मसीही जीवन एक पश्चातापपूर्ण जीवन है, क्योंकि जब तक हमारे जीवन में पाप रहता

सुसमाचार क्या है?

है, तब तक पाप का अंगीकार करने और उससे विमुख होने की आवश्यकता बनी रहती है। इसलिए प्रारम्भिक पश्चाताप जो हम क्रूस के तले लेकर आते हैं, वह एक बार में सदा के लिए कर लिया गया पश्चाताप नहीं है। हमें पश्चाताप का जीवन जीने, प्रतिदिन परमेश्वर के सामने अपने पापों का अंगीकार करने और जैसे-जैसे हम पवित्रता में बढ़ते हैं, पापपूर्ण आदतों और कार्यों से दूर होते जाने के लिए बुलाया गया है। हमारा जीवन अपने प्रभु और स्वामी के रूप में यीशु ख्रीष्ट पर कृतज्ञतापूर्वक निर्भरता के साथ पाप से विमुख होने का जीवन है।

एक बार जब हमारा उद्धार हो जाता है और हम ख्रीष्ट के साथ एक उद्धारक सम्बन्ध में होते हैं, तो धार्मिकता की हमारी खोज समाप्त नहीं होती है। यह वास्तव में अभी आरम्भ हुई है। बहुधा, हम परमेश्वर की खोज को ऐसी वस्तु मानते हैं जो तब समाप्त हो जाती है जब हम उसे प्राप्त कर लेते हैं, जबकि वास्तव में पवित्रशास्त्र हमें बताता है कि कोई भी व्यक्ति अपनी स्वाभाविक अवस्था में परमेश्वर की खोज नहीं करता है। हम वास्तव में तब तक परमेश्वर को खोजना आरम्भ नहीं करते हैं जब तक कि परमेश्वर हमें नहीं खोज लेता है। परमेश्वर और उसके राज्य के लिए हमारी खोज एक आजीवन उद्यम है, और यह हमारे धर्मीकरण से आरम्भ होता है। हम मार्ग के अन्त तक नहीं पहुँचे हैं। हम अभी तक अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँचे हैं। हम परमेश्वर द्वारा धर्मी घोषित और उद्घोषित किए जाने की सुखद स्थिति में हैं, परन्तु हम अभी भी उसकी समनुरूपता को खोजने की प्रक्रिया में हैं, और यह समनुरूपता निरन्तर प्रार्थना, पश्चाताप, क्रूस लेकर चलने और पवित्र आत्मा की उपस्थिति और सामर्थ्य के प्रकाश में सम्पूर्ण जीवन जीने के माध्यम से प्राप्त होती है।

अध्याय दस

उद्धारक विश्वास

Saving Faith

प्र लेख “यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: सुसमाचारवादी उत्सव” का अनुच्छेद 16 उद्धारक विश्वास के तीन तत्वों पर विचार करता है। पुष्टिकरण 16 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि उद्धारक विश्वास में सुसमाचार की सामग्री के लिए मानसिक सहमति, हमारे स्वयं के पाप और दरिद्रता का अंगीकार, और ख्रीष्ट और उसके कार्य पर व्यक्तिगत विश्वास और निर्भरता सम्मिलित है।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

सुसमाचार क्या है?

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि उद्धारक विश्वास में केवल सुसमाचार की मानसिक स्वीकृति सम्मिलित है, और यह कि धर्मीकरण केवल विश्वास के बाहरी अंगीकार के द्वारा प्राप्त कर लिया जाता है। हम इस बात का भी खण्डन करते हैं कि उद्धारक विश्वास का कोई भी तत्व एक योग्यता का कार्य है या हमारे लिए उद्धार उपार्जित करता है।

सुसमाचार की विषय-वस्तु के लिए मानसिक सहमति वह पहली बात है जिसकी अनुच्छेद 16 पुष्टि करता है। जब लूथर ने धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के मूल तत्व को स्पष्ट किया, तो केवल विश्वास द्वारा धर्मी ठहराए जाने का क्या अर्थ है, इसके विषय में बहुत भ्रम उत्पन्न हुआ। क्या केवल यह कहना कि “मैं सुसमाचार की सच्चाई की पुष्टि करता हूँ” आपको स्वर्ग में ले जाने के लिए पर्याप्त है? इस प्रकार के भ्रम के कारण, सोलहवीं शताब्दी में धर्मसुधारकों के लिए सच्चे उद्धारक विश्वास के घटक तत्वों को निकट से देखना आवश्यक था।

धर्मसुधारकों ने निर्धारित किया कि उद्धारक विश्वास में तीन तत्व सम्मिलित हैं: *नोटिश्या*, *असेन्सस* और *फिडुश्या*। नोटिश्या का सम्बन्ध सुसमाचार की विषय वस्तु से है। हम यह नहीं मानते कि लोग किसी भी वस्तु पर विश्वास करके उद्धार प्राप्त कर लेते हैं। जब नया नियम विश्वास द्वारा धर्मीकरण की बात करता है, तो इसका तात्पर्य कुछ सत्यों में और सबसे महत्वपूर्ण रूप से किसी विशेष व्यक्ति में विश्वास या भरोसे से है। हमें ख्रीष्ट पर विश्वास करना है। जब सुसमाचार की घोषणा की जाती है, तो इसमें निश्चित जानकारी होती

उद्धारक विश्वास

है कि यीशु कौन है और उसने क्या किया है: वह क्रूस पर मर गया, वह मृतकों में से जी उठा, इत्यादि। यह सब उद्धारक विश्वास की *नोटिस्या* का हिस्सा है।

दूसरा तत्व है *असेन्सस*, जो बौद्धिक या मानसिक सहमति है। यदि मैं पूछूँ, “क्या आप विश्वास करते हैं कि यीशु मृतकों में से जी उठा?” तो मैं पूछ रहा हूँ कि क्या आप अपने मन में *नोटिस्या* के सत्य, सुसमाचार की विषय-वस्तु की पुष्टि करते हैं। यह जानना पर्याप्त नहीं है कि सुसमाचार क्या सिखाता है; उद्धारक विश्वास रखने के लिए हमें यह भी विश्वास करना आवश्यक है कि वे शिक्षाएँ सत्य हैं—कि यह यीशु जो मर गया था और कब्र में गाड़ा गया था, वास्तव में ऐतिहासिक रूप से मृतकों में से जी उठा, इत्यादि। यदि कोई जन यह विश्वास नहीं करता है कि यीशु उद्धारकर्ता है, यदि वह इस विचार की सच्चाई के विषय में निश्चित नहीं है या यदि वह मानता है कि यीशु अभी भी मृत है या यह विश्वास करने में विफल रहता है कि उसका क्रूस पर चढ़ना प्रायश्चित था, तो उस व्यक्ति के पास वह नहीं है, जिसे बाइबल और धर्मसुधारकों ने उद्धारक विश्वास कहा है। उद्धार पाने के लिए, किसी भी व्यक्ति को वास्तव में अपने मन में सहमत होना होगा कि यीशु और उसके कार्य के विषय में ये कथन सत्य हैं।

उद्धारक विश्वास में एक तीसरा तत्व भी सम्मिलित है। याकूब ने लिखा, “तुम्हारा विश्वास है कि परमेश्वर एक ही है तो तुम ठीक करते हो,” और उसकी कलम से व्यंग्य टपकता है। “दुष्टात्माएँ भी विश्वास करती और थरथराती हैं!” (याकूब 2:19) याकूब कह रहा है कि परमेश्वर के अस्तित्व के अभिकथन को स्वीकार करना पर्याप्त नहीं है। शैतान जानता है कि परमेश्वर का अस्तित्व

सुसमाचार क्या है?

है। इसी प्रकार, यदि आपको मानसिक विश्वास है कि यीशु वही है जो उसने होने का दावा किया था और वह क्रूस पर प्रायश्चित्तकारी मृत्यु मरा और कब्र से जी उठा, तो यह सब आपको केवल एक दुष्टात्मा होने की योग्यता प्रदान करता है—क्योंकि दुष्टात्माओं को इन अभिकथनों की सच्चाई ज्ञात थी। यद्यपि आपको मानसिक सहमति के बिना धर्मी नहीं ठहराया जा सकता, फिर भी इसकी उपस्थिति धर्मिकरण की प्रत्याभूति (गारंटी) नहीं देती है। हमें *फिडुश्या*, या व्यक्तिगत विश्वास और निर्भरता की आवश्यकता है। जब पवित्रशास्त्र ख्रीष्ट को प्राप्त करने या ख्रीष्ट को ग्रहण करने या विश्वास में ख्रीष्ट के पास आने की बात करता है, तो इसका अर्थ न केवल यह विश्वास करना है कि वह एक उद्धारकर्ता है, वरन् उस पर अपने स्वयं के उद्धारकर्ता के रूप में विश्वास करना भी है। हमें अपने छुटकारे के लिए उसके कार्य और उसकी धार्मिकता पर निर्भर होना है। यह भरोसा या *फिडुश्या* है।

बाइबल हमें बताती है कि यदि हम अपने हृदय में विश्वास करें और अपने मुँह से अंगीकार करें कि ख्रीष्ट प्रभु हैं, तो हमारा उद्धार हो जाएगा (रोमियों 10:9), और कई अवसरों पर, पवित्रशास्त्र परमेश्वर के लोगों को अपने विश्वास का बाहरी अंगीकार करने के लिए कहता है। किसी कलीसिया में प्रवेश के लिए सामान्यतया किसी न किसी प्रकार के सार्वजनिक अंगीकार की आवश्यकता होती है। दुर्भाग्य से, आज हमारी संस्कृति में यह धारणा है कि मसीहियत एक ऐसा धर्म है जो व्यक्तिगत और निजी है। निस्सन्देह, मसीहियत व्यक्तिगत है। मैं, विश्वास के कारण यीशु ख्रीष्ट के साथ एक व्यक्ति के सम्बन्ध से अधिक व्यक्तिगत किसी वस्तु के विषय में नहीं सोच सकता।

उद्धारक विश्वास

परन्तु मसीहियत निजी नहीं है। हमारा विश्वास भले ही जितना भी व्यक्तिगत हो, हमें सदा परमेश्वर के अनुयायी के रूप में सार्वजनिक रूप से यह स्पष्ट करने के लिए तैयार होने के लिए बुलाया गया है कि हम ख्रीष्ट के सेवक हैं; हमें यीशु से गम्भीर चेतावनियाँ मिली हैं कि यदि हम लोगों के सामने उससे लज्जित होंगे, तो वह पिता के सामने हमसे लज्जित होगा (मत्ती 10:33)। यदि हम मनुष्यों के सामने यह अंगीकार नहीं करना चाहते हैं कि ख्रीष्ट हमारा छुटकारा देने वाला है, तो वह पिता के सामने हमारा अंगीकार नहीं करेगा। इसलिए ख्रीष्ट पर विश्वास का सार्वजनिक रूप से अंगीकार करना मसीही के लिए वैकल्पिक नहीं है।

यीशु ने उन लोगों को भी गम्भीर चेतावनियाँ दीं जो उस पर विश्वास का ऐसा अंगीकार करते हैं जो सत्यनिष्ठ या सच्चा नहीं है। हमारा प्रभु कहता है, “ये लोग होठों से तो मेरा आदर करते हैं, परन्तु इनका हृदय मुझसे दूर है” (मत्ती 15:8)। सम्भवतया, सबसे डरावना सन्देश जो यीशु ने दिया वह पहाड़ी उपदेश के चरमोत्कर्ष पर आया था। उसने कहा कि अन्तिम दिन बहुत से लोग यह कहते हुए आएँगे, “हे प्रभु, हे प्रभु, क्या हमने तेरे नाम से यह नहीं किया और क्या हमने तेरे नाम से वह नहीं किया?” और इसी प्रकार अन्य बातें, और उसने कहा, “मैं उन से कहूँगा: मैंने तुमको कभी नहीं जाना; हे, कुकर्मियों मुझसे दूर हटो” (मत्ती 7:21-23 देखें)। हमारा प्रभु हमें लोगों द्वारा ख्रीष्ट में अपने विश्वास की मौखिक साक्षी देने की वास्तविक सम्भावना के विषय में चेतावनी देता है, जबकि वास्तव में उनके पास ख्रीष्ट में प्रामाणिक विश्वास नहीं है। दूसरे शब्दों में, हम विश्वास के अंगीकार के द्वारा नहीं वरन् विश्वास के होने

सुसमाचार क्या है?

के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं, और हम इसका अंगीकार तब भी कर सकते हैं जब वह हमारे पास नहीं है। इस अनुच्छेद के खण्डन में यही दिख रहा है; यह इस बात का खण्डन करता है कि धर्मीकरण केवल विश्वास के बाहरी अंगीकार से प्राप्त हो जाता है।

आइए, इसे व्यावहारिक दृष्टि से देखें। अमेरिका में, विशेष रूप से सामूहिक सुसमाचार प्रचार तकनीकों में, सुसमाचार प्रचार के बाद, ख्रीष्ट को स्वीकार करने का निमन्त्रण, जिसे कभी-कभी वेदी पुकार (*altar-call*) भी कहा जाता है, प्रायः दिया जाता है। धारणा यह है कि यदि कोई जन ख्रीष्ट को अपने उद्धारकर्ता के रूप में स्वीकार करने के लिए प्रार्थना करता है और ऐसा हृदय से करता है, तो उसका उद्धार हो जाएगा। परन्तु लोगों को भावनात्मक रूप से उस सीमा तक उत्साहित करना सम्भव है, जहाँ उन्हें विश्वास का बाहरी अंगीकार करने के लिए प्रेरित कर दिया जाए। परन्तु बाइबल यह नहीं सिखाती है कि हम केवल एक प्रार्थना बोल देने के द्वारा परमेश्वर के सामने धर्मी ठहर जाते हैं। हम केवल हाथ उठाने के द्वारा धर्मी नहीं ठहराए जाते हैं। न ही हम किसी वेदी के पास चलकर जाने के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं। हम विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए जाते हैं। ये कार्य विश्वास के अंगीकार के ऐसे बाहरी संकेत हैं, जो सच्चे विश्वास की उपस्थिति के बिना भी किए जा सकते हैं। परन्तु हमें यह नहीं मान लेना चाहिए कि हम सुरक्षित रूप से ख्रीष्ट के झुण्ड में केवल इसलिए हैं क्योंकि हम चर्च के सामने चल कर गए थे या हमने हाथ उठाया था या प्रार्थना की थी। वास्तविक मांग है विश्वास।

अन्त में खण्डन कहता है, “हम इस बात का भी खण्डन करते हैं कि उद्धारक विश्वास का कोई भी तत्व एक योग्यता का कार्य है या हमारे लिए उद्धार

उद्धारक विश्वास

उपार्जित करता है।” यहाँ कुछ भ्रम उत्पन्न हो सकता है क्योंकि यीशु ने एक बार कहा था, “परमेश्वर का कार्य यह है कि जिसे उसने भेजा है तुम उस पर विश्वास करो” (यूहन्ना 6:29)। कुछ लोगों ने इसका अर्थ यह निकाला है कि एक अच्छा कार्य जो हमें धर्मी ठहराता है वह विश्वास का कार्य है। वे कहते हैं कि एक प्रकार की योग्यता होती है जो वास्तविक विश्वास से जुड़ी होती है, और इसलिए विश्वास और कार्य के बीच का अन्तर समाप्त हो जाता है। अब, जब आप लोगों के साथ ईश्वरविज्ञानीय विचार-विमर्श करते हैं और पूछते हैं, “क्या आप मानते हैं कि विश्वास एक योग्यता का कार्य है?” मसीही होने का दावा करने वाले अधिकाँश लोग इतना ज्ञान तो रखते हैं कि कह उठते हैं: “कदापि नहीं। मेरा विश्वास व भरोसा यीशु के योग्यता के कार्यों पर है।” तथापि, हम सरलता से अपने हृदय में यह विचार रख सकते हैं कि हमारे विश्वास में अन्तर्निहित योग्यता है; हम यह मान सकते हैं कि परमेश्वर हमारे विश्वास करने को एक योग्यता के रूप में देखता है जिसका वह प्रतिफल देता है।

इस विषय में सोचें कि आप मसीही क्यों हैं और कोई अन्य क्यों नहीं है। क्या ऐसा इसलिए है क्योंकि आपने कुछ ऐसा धार्मिकता का कार्य किया है जो आपके पड़ोसी ने नहीं किया? अधिकाँश लोग सार्वजनिक रूप से यह नहीं कहेंगे, “मैं मसीही हूँ क्योंकि मैं अपने पड़ोसी से श्रेष्ठतर हूँ।” परन्तु कभी-कभी यह विचार हमारे मस्तिष्क में आ जाता है, और एक पल के लिए भी यह सोचना हमारे लिए एक घातक धोखा है कि हमारे उद्धारक विश्वास के पास आने में कोई योग्यता या गुण है। ऑगस्टस टोपलेडी ने “युगों की चट्टान” (*Rock of Ages*) भजन में इसे सही कहा था जब उन्होंने लिखा था,

सुसमाचार क्या है?

“मैं अपने हाथ में कुछ भी नहीं लाता हूँ; मैं बस तेरे क्रूस से लिपटा हुआ हूँ।” विश्वास वह पाल है जिसके द्वारा हम किसी और की योग्यता प्राप्त करते हैं, न कि ऐसी कोई वस्तु जो हमें किसी प्रकार की योग्यता के आधार पर परमेश्वर के उद्धार के अनुग्रह पर दावा प्रदान करती है।

उद्धारक विश्वास के तत्वों को देखते हुए, यह समझना महत्वपूर्ण है कि हमारा उद्धार प्रभु की ओर से है; यह परमेश्वर के अनुग्रह और ख्रीष्ट के कार्य पर निर्भर है। यह हमारा कार्य नहीं है जो परमेश्वर की धार्मिकता की माँगों को सन्तुष्ट करता है। यह केवल ख्रीष्ट का कार्य है। विश्वास केवल वह योग्यता प्राप्त करती है जो किसी और ने हमारे लिए उपार्जित की है। हमें अपने मन और हृदय में यह विचार आने से बचना होगा कि हम परमेश्वर के द्वारा आशीषित हैं क्योंकि किसी प्रकार से हम इसके योग्य हैं, क्योंकि किसी प्रकार से हमने उसकी कृपादृष्टि को उपार्जित किया है।

हम विश्वास के द्वारा, प्रामाणिक विश्वास के होने के द्वारा धर्मी ठहराए गए हैं, न कि मात्र इसके अंगीकार के द्वारा। और मसीहियों के रूप में हमें यीशु ख्रीष्ट से लज्जित नहीं होना चाहिए। हमें लोगों को उसमें अपने विश्वास के विषय में बताना चाहिए।

अध्याय ग्यारह

ख्रीष्ट और धर्मसिद्धान्त

Christ and Doctrine

ऐसा सम्भव है कि हम सुसमाचार की विषय-वस्तु के विषय में ईश्वरविज्ञानीय परीक्षा में 100 प्रतिशत अंक प्राप्त कर लें और फिर भी हमारे पास सच्चा उद्धारक विश्वास न हो। सुसमाचार का ज्ञान—यहाँ तक कि उस ज्ञान को बौद्धिक रूप से ग्रहण कर लेना भी—हमारा उद्धार नहीं करता है। निश्चित रूप से, जो हमारा उद्धार करता है, वह ख्रीष्ट है। पुष्टिकरण 17 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि, यद्यपि सच्चा धर्मसिद्धान्त आत्मिक स्वास्थ्य और भलाई के लिए महत्वपूर्ण है, हमारा उद्धार धर्मसिद्धान्त द्वारा नहीं होता है। धर्मसिद्धान्त हमें यह सूचित करने के लिए आवश्यक है कि ख्रीष्ट के द्वारा कैसे हमारा उद्धार हो सकता है, परन्तु यह ख्रीष्ट ही है जो उद्धार करता है।

सुसमाचार क्या है?

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार के धर्मसिद्धान्तों को बिना किसी हानि के अस्वीकार किया जा सकता है। सुसमाचार का अस्वीकरण आत्मिक विनाश लेकर आता है और हमें परमेश्वर के न्याय के सामने खड़ा कर देता है।

हम जानते हैं कि ख्रीष्ट हमारे प्राणों का उद्धारकर्ता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि ख्रीष्ट के धर्मसिद्धान्त और सुसमाचार से सम्बन्धित धर्मसिद्धान्त महत्वहीन हैं। धर्मसिद्धान्त हमारा उद्धार नहीं करता है, परन्तु यह आत्मिक स्वास्थ्य और भलाई के लिए महत्वपूर्ण है। मार्टिन लूथर ने टिप्पणी की कि उनके समकालीनों में से एक, इरास्मस (*Erasmus*) ने, “पोप पर उनके पेट पर आक्रमण किया था, परन्तु मैंने उनके धर्मसिद्धान्त पर आक्रमण किया है।” आज किसी के धर्मसिद्धान्त की तुलना में उसके पेट पर आक्रमण करना कहीं अधिक निन्दनीय होगा, क्योंकि हम ऐसे युग में रहते हैं जहाँ लोगों के लिए धर्मसिद्धान्त अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। एक अन्य अवसर पर लूथर को चुनौती दी गई थी क्योंकि उनके कुछ अनुयायियों ने निन्दनीय व्यवहार प्रदर्शित किया था। उन्होंने स्वीकार किया कि धर्म-सुधार आन्दोलन में कई लोग भ्रष्ट थे और सुसमाचार के लिए कलंक थे, परन्तु यह बात तो हर अंगीकार करने वाले समूह के लिए सच है। उन्होंने कहा कि उनके पास जो है वह सही धर्मसिद्धान्त है। लूथर का यह अभिप्राय नहीं था कि सही धर्मसिद्धान्त भ्रष्ट व्यवहार को उचित ठहराता है। किसी के पास सही धर्मसिद्धान्त हो सकता है और फिर भी वह

भ्रष्ट जीवन जी सकता है, परन्तु किसी के पास ऐसा जीवन नहीं हो सकता जो परमेश्वर को प्रसन्न करता हो यदि वह परमेश्वर की उस सच्चाई की उपेक्षा करता है जो उसने हमें पवित्रशास्त्र में दी है, क्योंकि यही धर्मसिद्धान्त है।

हम ऐसा सोचते हैं कि धर्मसिद्धान्त पुस्तकालयों के धूल भरे हॉलों या अकादमिक कक्षाओं तक सीमित अभिकथनों (*propositions*) की एक अमूर्त (*abstract*) सूची है जिसका हमारे व्यावहारिक दैनिक जीवन पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है। यह कहना ऐसा है जैसा यह कहें कि बाइबल का हमारे जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। हम शास्त्रसम्मतता (*orthodoxy*) और शास्त्रसम्मत आचरण (*orthopraxy*) के मध्य अन्तर कर सकते हैं—अर्थात्, धर्मसिद्धान्त और अभ्यास के मध्य—परन्तु हमें इन्हें एक दूसरे से अलग नहीं करना है क्योंकि सच्चा जीवन उस विषय वस्तु की सच्ची समझ से उत्पन्न होता है जिसे परमेश्वर ने पवित्रशास्त्र में हमारे लिए प्रकट किया है। जब सुसमाचार को समझने की बात आती है तो यह निश्चित रूप से सच है।

मसीहियों के रूप में सुसमाचार को सही ढंग से समझना हमारे लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि सुसमाचार ही उद्धार के लिए परमेश्वर का सामर्थ्य है, यह पवित्रशास्त्र में हम पर प्रकट किया गया है, और इसमें ख्रीष्ट का व्यक्ति और कार्य सम्मिलित है—उसका पाप रहित जीवन, उसकी प्रायश्चित्तकारी मृत्यु (*atonement death*), और उसका पुनरुत्थान। ये सभी बातें वे सत्य हैं जो पवित्रशास्त्र में हम पर प्रकट हुए हैं, और ये मिलकर सुसमाचार की विषय वस्तु बनाते हैं। हमने अपने सम्पूर्ण प्रलेख में जो देखा है वह उन विशिष्ट तत्वों पर बल है जो सुसमाचार की विषय वस्तु में निहित हैं।

सुसमाचार क्या है?

मान लीजिए कि प्रायश्चित के विषय में आपका धर्मसिद्धान्त त्रुटिपूर्ण है। मान लीजिए कि आप मानते हैं कि यीशु क्रूस पर हमारे स्थान पर परमेश्वर के न्याय को सन्तुष्ट करने के लिए नहीं, वरन् केवल स्वयं को एक नैतिक उदाहरण के रूप में प्रदर्शित करने के लिए मरा। क्रूस के विषय में त्रुटिपूर्ण धर्मसिद्धान्त, अर्थात् प्रायश्चित के दोषपूर्ण धर्मसिद्धान्त को अपनाने के कारण आपने सुसमाचार को सही से नहीं समझा है। सुसमाचार का आपका धर्मसिद्धान्त आपके प्रायश्चित के धर्मसिद्धान्त के साथ गिर जाता है। यदि आप ख्रीष्ट के पुनरुत्थान को अस्वीकार करते हैं, तो आप न केवल उस धर्मसिद्धान्त के सत्य को खो रहे हैं, परन्तु आपके पास सुसमाचार भी नहीं है, क्योंकि पुनरुत्थान सुसमाचार का एक आवश्यक घटक है। यदि आप प्रायश्चित पर विश्वास करते हैं और ख्रीष्ट के पुनरुत्थान पर विश्वास करते हैं, परन्तु आप मानते हैं कि किसी प्रकार से आपको उद्धार पाने के लिए ख्रीष्ट के कार्य का लाभ उपार्जित करना होगा, तो भी आपके पास सही सुसमाचार नहीं है, क्योंकि आप इस बात को सही रीति से नहीं समझ रहे हैं कि ख्रीष्ट का कार्य आपके जीवन पर कैसे लागू किया जाता है।

कुछ लोग कहते हैं: “मुझे किसी धर्मसिद्धान्त को जानने की आवश्यकता नहीं है। मुझे केवल यीशु को जानने की आवश्यकता है।” प्रश्न यह है कि, यीशु कौन है? जिस क्षण कोई भी उस प्रश्न का उत्तर देना आरम्भ करता है, वह धर्मसिद्धान्त में सलग्न हो गया है। उस प्रश्न का उत्तर देने में ख्रीष्ट के विषय में अपने धर्मसिद्धान्त को समझाना सम्मिलित है। जो मसीही सोचते हैं कि उन्हें ईश्वरविज्ञान को जानने की आवश्यकता नहीं है, वे मूल बात से चूक गए हैं।

ख्रीष्ट और धर्मसिद्धान्त

ऐसा नहीं है कि आपको एक व्यावसायिक ईश्वरविज्ञानी या विद्वान बनना है, परन्तु आपको अभी भी इस अर्थ में एक ईश्वरविज्ञानी होना है कि आपको परमेश्वर की, तथा यीशु ख्रीष्ट की कुछ समझ होनी चाहिए। सुसमाचार को समझने के लिए आपके पास परमेश्वर का धर्मसिद्धान्त, मनुष्य का धर्मसिद्धान्त और ख्रीष्ट का धर्मसिद्धान्त होना चाहिए। तो प्रश्न यह नहीं है कि आपके पास ईश्वरविज्ञान है या नहीं। प्रश्न यह है कि क्या आपके पास सही ईश्वरविज्ञान है या दोषपूर्ण ईश्वरविज्ञान है; अच्छा धर्मसिद्धान्त है या झूठा धर्मसिद्धान्त है।

कलीसिया में हम जिन बड़े विवादों का सामना करते हैं उनमें से एक यह है कि उद्धार के लिए कौन से धर्मसिद्धान्त आवश्यक हैं; अर्थात्, वे कौन से धर्मसिद्धान्त हैं, जिन्हें यदि अस्वीकार कर दिया जाए, तो इसका अर्थ होगा कि आप मसीही नहीं हो सकते हैं। कलीसिया कई भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों (*denominations*) में विभाजित है, सभी के इस धर्मसिद्धान्त या उस धर्मसिद्धान्त के विषय में अपने विशेष विचार हैं, और इसका अर्थ है कि, सामान्य रूप से देखा जाए तो, कई प्रकार की त्रुटियाँ कलीसिया में घुस चुकी हैं। निश्चित रूप से, परमेश्वर के सत्य का कोई भी विकृतिकरण एक गम्भीर बात है, परन्तु सभी विकृतियाँ समान रूप से गम्भीर नहीं होती हैं। इसलिए, जो आवश्यक है और जो आवश्यक नहीं है, हम उनके मध्य अन्तर करते हैं।

एक बार किसी ने मुझसे पूछा कि क्या मैं बाइबल की त्रुटिहीनता में विश्वास करता हूँ, और मैंने कहा, “हाँ, मैं विश्वास करता हूँ।” और उन्होंने कहा, “क्या आप मानते हैं कि यह उद्धार के लिए आवश्यक है?” मैंने कहा, “नहीं, मुझे नहीं लगता कि किसी व्यक्ति को उद्धार के लिए यह विश्वास करना

सुसमाचार क्या है?

होगा कि बाइबल परमेश्वर के द्वारा प्रेरित है और लुटि रहित है।” मैं कहूंगा कि उद्धार के सार-तत्त्व के सम्बन्ध में, आपको यह विश्वास करने की आवश्यकता नहीं है कि बाइबल परमेश्वर का वचन है। क्या इसका अभिप्राय यह है कि मुझे लगता है कि पवित्रशास्त्र की लुटिहीनता महत्वहीन है? नहीं, मैं कहता हूँ कि हम कलीसिया या मसीही के अस्तित्व और कलीसिया और मसीही के स्वस्थ अस्तित्व के मध्य अन्तर कर सकते हैं। पवित्रशास्त्र का दृढ़ धर्मसिद्धान्त कलीसिया और मसीहियों के स्वस्थ अस्तित्व के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, यद्यपि यह ऐसा धर्मसिद्धान्त नहीं है जिस पर विश्वास करना उद्धार के लिए आवश्यक है। तथापि, क्या ख्रीष्ट का प्रायश्चित केवल मसीही या कलीसिया के स्वस्थ अस्तित्व का विषय है? नहीं, यह उससे भी अधिक है। यह वह बात है जिस पर उद्धार पाने के लिए आपको विश्वास करना ही होगा। कलीसिया के अस्तित्व और स्वस्थ-अस्तित्व के मध्य यह अन्तर पूरे इतिहास में सहायक रहा है।

फिर, जैसा कि हमारे प्रलेख में कहा गया है, धर्मसिद्धान्त हमें यह बताने के लिए आवश्यक है कि हमारा उद्धार कैसे हो सकता है। सुसमाचार के विषय में हम जो भी जानकारी सम्प्रेषित करते हैं वह धर्मसिद्धान्त है। इसलिए यदि हमारे पास कोई धर्मसिद्धान्त नहीं है, तो हमें सुसमाचार की कोई समझ नहीं है। यदि हमारे पास कोई धर्मसिद्धान्त नहीं है, तो हमें ज्ञात नहीं है कि हमें किस बात पर विश्वास करना है। हमें स्मरण है कि भूकम्प के द्वारा बन्दीगृह की नींव हिला देने के पश्चात् फिलिप्पी के दरोगा ने भय और घबराहट के कारण प्रेरित पौलुस को चिल्लाकर पुकारा था। उसने कहा, “सज्जनों, उद्धार पाने के लिए मैं

क्या करूँ?” (प्रेरितों 16:30)। वह जानकारी माँग रहा था। उसे यह जानने की आवश्यकता थी कि उद्धार के लिए क्या आवश्यकताएँ हैं, और प्रेरित ने उसे बताया कि उद्धार पाने के लिए उसे क्या करने की आवश्यकता है।

अनुच्छेद 17 के खण्डन में कहा गया है: “हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार के धर्मसिद्धान्तों को बिना किसी हानि के अस्वीकार किया जा सकता है। सुसमाचार का अस्वीकरण आत्मिक विनाश लेकर आता है और हमें परमेश्वर के न्याय के सामने खड़ा कर देता है।” जब प्रलेख आत्मिक विनाश की बात करता है, तो यह अन्तिम और सम्पूर्ण आत्मिक विनाश की बात कर रहा है। जो कोई सुसमाचार को अस्वीकार करता है वह परमेश्वर के न्याय के सामने खड़ा होता है।

परमेश्वर के सुसमाचार का प्रस्ताव कई विकल्पों में से केवल एक विकल्प नहीं है। हमने देखा है कि आज कई कलीसियाएँ आराधना सभा के अन्त में एक तथाकथित निमन्त्रण देती हैं, जिसमें पापियों को आगे आने और ख्रीष्ट को अपना जीवन देने के लिए आमंत्रित किया जाता है। मैं समझता हूँ कि लोग घमण्डी या धूर्त नहीं होना चाहते, परन्तु “निमन्त्रण” की भाषा से ही कुछ अनुचित संचार किया जा रहा है। हमारी संस्कृति में, निमन्त्रण सामान्यतया एक पत्र के साथ आता है जिस पर “आर एस वी पी” लिखा होता है; आप निमन्त्रण का सकारात्मक या नकारात्मक उत्तर देने के लिए स्वतन्त्र हैं, और आप बिना किसी दण्ड के निमन्त्रण को अस्वीकार कर सकते हैं। परन्तु जैसा कि पौलुस ने अरेस की पहाड़ी पर घोषणा की, अज्ञानता के पुराने दिन समाप्त

सुसमाचार क्या है?

हो गए हैं, और परमेश्वर अब “हर जगह के सब मनुष्यों को आज्ञा देता है कि पश्चाताप करें” (प्रेरितों के काम 17:30)। नए नियम में, सुसमाचार की घोषणा एक ईश्वरीय आज्ञा के रूप में संसार के लिए आती है। परमेश्वर हर स्थान पर सभी लोगों को ख्रीष्ट को ग्रहण करने, तथा सुसमाचार को ग्रहण करने की आज्ञा देता है। सुसमाचार को सुनने के बाद उसे अस्वीकार करना आत्मिक विनाश को स्वीकार करना और परमेश्वर के न्याय के सामने खड़े होना है।

धर्मसिद्धान्त का अध्ययन करना संकटपूर्ण कार्य हो सकता है। हमें नए नियम में बताया गया है कि ज्ञान घमण्डी बनाता है परन्तु प्रेम से उन्नति होती है (1 कुरिन्थियों 8:1), और केवल संसार को यह दिखाने के लिए कि हमने इस सामग्री में निपुणता प्राप्त कर ली है, हम ईश्वरविज्ञान या धर्मसिद्धान्त के अध्ययन में पूरी रीति से बौद्धिक रुचि रख सकते हैं। धर्मसिद्धान्त का हमारा अध्ययन अन्य लोगों की दृष्टि में स्वयं को श्रेष्ठ दिखाने के प्रयास से प्रेरित हो सकता है, और इस अर्थ में यह हमें घमण्ड से भर सकता है। इसीलिए हमारे लिए यह समझना महत्वपूर्ण है कि धर्मसिद्धान्त ने अपने आप में कभी किसी का उद्धार नहीं किया है, वरन् ख्रीष्ट और केवल ख्रीष्ट ही उद्धारकर्ता हैं। हमें उत्साहपूर्वक और परिश्रमपूर्वक धर्मसिद्धान्त को समझने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि इसका अर्थ है कि हम उन बातों को समझने का परिश्रमपूर्वक प्रयास कर रहे हैं जिन्हें परमेश्वर ने अपने वचन में हम पर प्रकट किया है।

अध्याय बारह

सुसमाचार की उद्घोषणा

Proclaiming the Gospel

महान् आदेश ख्रीष्ट का अपने शिष्यों और अपनी कलीसिया को दिया गया आदेश है जो उसने अपने स्वर्गारोहण से ठीक पहले दिया था, जब उसने अपने शिष्यों को सम्पूर्ण संसार में जाने और हर जीवित प्राणी को सुसमाचार प्रचार करने, समस्त कुल, लोग, भाषा और जाति में से शिष्य बनाने की आज्ञा दी थी (मत्ती 28:18-20; प्रकाशितवाक्य 7:9)। इसने पहली शताब्दी से कलीसिया के सुसमाचार-प्रसार कार्य को परिभाषित किया है, और यह “यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: सुसमाचारवादी उत्सव” प्रलेख के अन्तिम अनुच्छेद का केन्द्र है। पुष्टिकरण 18 में लिखा है:

हम पुष्टि करते हैं कि यीशु ख्रीष्ट अपने अनुयायियों को सभी जीवित

सुसमाचार क्या है?

व्यक्तियों को सुसमाचार की घोषणा करने, हर स्थान में हर किसी को सुसमाचार प्रचार करने और विश्वासियों को कलीसिया की संगति में शिष्य बनाने की आज्ञा देता है। ख्रीष्ट की एक पूर्ण और विश्वासयोग्य साक्षी में व्यक्तिगत गवाही की साक्षी, भक्तिपूर्ण जीवन, और हमारे पड़ोसी के प्रति दया और परोपकार के कार्य सम्मिलित हैं, जिसके बिना सुसमाचार का उपदेश निष्फल प्रतीत होता है।

सम्बन्धित खण्डन में लिखा है:

हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार की घोषणा से हटकर व्यक्तिगत गवाही, भक्तिपूर्ण जीवन, और हमारे पड़ोसियों के प्रति दया और परोपकार के कार्यों की साक्षी सुसमाचार प्रचार का निर्माण करती है।

मैंने एक बार एक सुसमाचार-प्रसारक से बात की थी जो संसार के एक दूरस्थ हिस्से में परिश्रम कर रही थीं, और ऐसे लोगों के समूह की सेवा कर रही थीं जिन्होंने पहले कभी पश्चिम के किसी व्यक्ति को नहीं देखा था। सुसमाचार-प्रसारक ने इस जनजाति के साथ कई वर्षों तक परिश्रम किया, और जब अन्ततः उन्हें सुसमाचार समझ आ गया, तो कई लोग ख्रीष्ट के पास आ गए—जिनमें गाँव का मुखिया भी सम्मिलित था। एक अवसर पर मुखिया ने सुसमाचार-प्रसारक से पूछा कि यीशु पृथ्वी पर कितने समय पहले रहा था।

सुसमाचार की उद्घोषणा

सुसमाचार-प्रसारक ने दो हजार वर्षों की विशाल समय दूरी को उन लोगों की भाषा में व्यक्त करने का ढंग खोजने का प्रयास किया। जब तक वे पीढ़ियों के विषय में बात नहीं करते, तब तक उनके पास इसे व्यक्त करने का कोई ढंग नहीं था। फिर मुखिया ने कुछ छड़ियाँ लीं, और प्रत्येक छड़ी एक पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती थी। उसने पूछा, “क्या यीशु मेरी पीढ़ी के समय में रहा?” और सुसमाचार-प्रसारक ने कहा नहीं। फिर उसने दूसरी छड़ी ली और कहा, “क्या वह मेरे पिता के जीवनकाल में रहा?” नहीं। और फिर तीसरी छड़ी: “मेरे दादा के जीवनकाल में?” नहीं। और हर छड़ी के साथ जो वह भूमि पर रख रहे थे, उनका चेहरा और अधिक व्यथित होता जा रहा था। जब अन्ततः उनके पास भूमि पर पहली शताब्दी तक फैली हुई छड़ियों की लम्बी पंक्ति थीं, तो वह अत्यन्त व्याकुल हो उठा, और उसने पूछा, “यदि यीशु इतने समय पहले रहा, तो हम उसके विषय में अब इतने समय बाद ही क्यों सुन रहे हैं?”

दुर्भाग्य से, हम ख्रीष्ट के महान् आदेश के प्रति उतने विश्वासयोग्य नहीं रहे हैं जितना हमें होना चाहिए। आज भी इस ग्रह पर ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्होंने कभी यीशु ख्रीष्ट का नाम नहीं सुना है। महान् आदेश को पूरा नहीं करने के लिए सम्भवतया हमारी पीढ़ी के पास सब पीढ़ियों से कम बहाना है, क्योंकि संसार जितना भूतकाल में था उससे बहुत छोटा हो गया है। हमारे पास कई आधुनिक सुविधाओं और परिवहन के साधनों के साथ यात्रा करने की महान् क्षमता है। पुष्टिकरण 18 हमें स्मरण करवाता है कि ख्रीष्ट अपने अनुयायियों

सुसमाचार क्या है?

को सभी जीवित लोगों को सुसमाचार की घोषणा करने, हर स्थान में, हर किसी को सुसमाचार प्रचार करने का आदेश देता है।

आज कुछ लोग सुसमाचार प्रचार के प्रति नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। उनका मानना है कि लोगों को अपने काम से काम रखना चाहिए और दूसरे लोगों को इस बात के लिए प्रभावित करने का प्रयास नहीं करना चाहिए कि वे जिस भी धर्म में हैं, उसे छोड़ दें और ख्रीष्ट को ग्रहण कर लें। वास्तव में, कई कलीसियाएँ चुपचाप यह मान लेती हैं कि कुछ लोग या समूह सुसमाचार प्रचार की सीमा से बाहर हैं। इसलिए, हममें से बहुत से लोग दूसरों तक अपनी पहुँच में निष्क्रिय या सीमित हैं और हर स्थान पर सभी लोगों को सुसमाचार का प्रचार करने के हमें दिए गए आदेश को पूरा नहीं करते हैं।

हम न केवल अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर महान् आदेश को पूरा करने में विफल होते हैं, परन्तु हम जहाँ रहते हैं, वहाँ स्थानीय स्तर पर भी विफल होते हैं। आदेश यह है कि हर स्थान पर हर किसी को सुसमाचार का प्रचार किया जाए और कलीसिया की संगति में विश्वासियों को शिष्य बनाया जाए। महान् आदेश की आज्ञा केवल प्रचार करना नहीं है, परन्तु शिक्षित करना या शिष्य बनाना भी है। यीशु ने कहा कि सुसमाचार का प्रचार करो और शिष्य बनाओ। शिष्य एक शिक्षार्थी या छात्र होता है, और इसका अर्थ यह है कि लोगों द्वारा सुसमाचार पर सकारात्मक प्रतिक्रिया देने के बाद, उन्हें कलीसिया के जीवन में गहराई से सम्मिलित होने के लिए बुलाया जाता है क्योंकि कलीसिया न केवल घोषणा करने के लिए अस्तित्व में है, परन्तु ख्रीष्ट के पास आने वाले हृदय-परिवर्तित लोगों को परमेश्वर की बातों की गहरी समझ में स्थापित करने के

सुसमाचार की उद्घोषणा

लिए भी है। प्रारम्भिक कलीसिया ने नए अनुयायियों के लिए धार्मिक शिक्षा और सुसमाचार उद्घोषणा के बीच अन्तर किया। जो लोग सुसमाचार प्रचार के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त देते थे, उन्हें कलीसिया के समुदाय में लाया जाता था, और यहीं से ख्रीष्ट के छात्रों और अनुयायियों के रूप में उनका पालन-पोषण और शिष्यत्व आरम्भ होता था।

पुष्टिकरण 18 आगे कहता है, “ख्रीष्ट की एक पूर्ण और विश्वासयोग्य साक्षी में व्यक्तिगत गवाही की साक्षी, भक्तिपूर्ण जीवन, और हमारे पड़ोसी के प्रति दया और परोपकार के कार्य सम्मिलित हैं, जिसके बिना सुसमाचार का उपदेश निष्फल प्रतीत होता है।” अनुच्छेद 18 का यह खण्ड ख्रीष्ट की साक्षी देने के विभिन्न ढंगों के विषय में बताता है। नए नियम में, *सुसमाचार प्रचार* और *साक्षी देने* के बीच अन्तर है। मसीही लोग आज *साक्षी* शब्द का उपयोग *सुसमाचार प्रचार करना* नामक क्रिया के पर्याय के रूप में करते हैं, जैसे कि वे विनिमेय (एक दुसरे के स्थान पर प्रयुक्त होने में सक्षम) शब्द हों।

ख्रीष्ट की साक्षी देना कई अलग-अलग ढंगों से उसकी ओर ध्यान आकर्षित करना है। हम इसे उस उदाहरण के द्वारा करते हैं जिसे हम भक्तिपूर्ण जीवन के द्वारा स्थापित करना चाहते हैं। हम दया के कर्मों और कार्यों के माध्यम से साक्षी देना या ख्रीष्ट की उपस्थिति को प्रकट करना चाहते हैं: जैसे कि भूखों को भोजन करवाना, बेघरों को आश्रय देना और अन्य परोपकार के प्रयासों में भाग लेना। वे विभिन्न प्रकार की साक्षी हैं, परन्तु ये सभी सुसमाचार प्रचार नहीं हैं। सुसमाचार प्रचार साक्षी देने का एक रूप है,

सुसमाचार क्या है?

परन्तु सभी प्रकार की साक्षी सुसमाचार प्रचार नहीं है। हम कई ढंगों से ख्रीष्ट के प्रभुत्व की साक्षी देते हैं, जिनमें से एक सुसमाचार की घोषणा है।

हम इस पर क्यों बल देते हैं? यह महत्वपूर्ण है क्योंकि लोग कहते हैं: “मैं अपना सुसमाचार प्रचार कार्य अपने उदाहरण के द्वारा करता हूँ। मैं कभी भी ख्रीष्ट की घोषणा शब्दों से नहीं करता। मैं अपने जीवन के द्वारा ख्रीष्ट का प्रचार करता हूँ।” आपका जीवन लोगों को सुसमाचार की विषय-वस्तु के विषय में क्या बता सकता है? वे अब से राज्य आने तक आपको देख लें और फिर भी ख्रीष्ट के प्रायश्चित, ख्रीष्ट के पुनरुत्थान, या केवल विश्वास द्वारा धर्मीकरण के धर्मसिद्धान्त के विषय में कुछ भी नहीं जानेंगे। केवल आपके जीवन को देखकर कोई उसे कैसे पढ़ सकता है? आपके भक्तिपूर्ण उदाहरण के परिणामस्वरूप कोई यह पूछ सकता है, “आप जिस ढंग से जीते हैं, वैसे क्यों जीते हैं?” यह आपके लिए उन्हें सुसमाचार समझाने का अवसर हो सकता है। परन्तु भक्तिपूर्ण जीवन जीने का आपका उदाहरण लोगों तक सुसमाचार संचारित नहीं कर सकता। कभी-कभी हम चुप रहने और लोगों को सुसमाचार का प्रचार न करने का यह कहते हुए बहाना बनाते हैं: “मैं मौखिक रूप से दूसरों पर अपने विचार नहीं थोपूँगा। मैं तब तक प्रतीक्षा करूँगा जब तक वे मेरे उत्कृष्ट उदाहरण के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं देते।” हमें यह भी स्वीकार करना चाहिए कि हममें से ना के बराबर लोग ही अपने पविलीकरण में इतने आगे हैं कि संसार हमारा द्वार खटखटाकर, पूछता है कि कौनसी बात हमें इतना विशेष बनाती है और हमसे विनती करता है कि हम उन्हें बताएँ कि इसे कैसे प्राप्त किया जाए।

सुसमाचार की उद्घोषणा

दूसरी ओर, यदि हम अपने पड़ोसियों की आधारभूत दैनिक आवश्यकताओं के लिए कोई चिन्ता नहीं दिखाते हैं और हम केवल उन्हें यीशु का प्रचार करते हैं, तो हमारा प्रचार उन्हें निष्फल लगेगा। हाँ, यह सुसमाचार प्रचार के माध्यम से ही है कि परमेश्वर ने संसार का उद्धार करने का निर्णय लिया है, और यह सुसमाचार ही है जिसे परमेश्वर लोगों को ख्रीष्ट के पास लाने के लिए अपनी सामर्थ्य के रूप में उपयोग करता है। परन्तु नया नियम हमें चेतावनी देता है: “हे मेरे भाइयो, यदि कोई कहे कि मैं विश्वास करता हूँ पर कर्म न करे तो इससे क्या लाभ? क्या ऐसा विश्वास उसका उद्धार कर सकता है? यदि किसी भाई या बहिन के पास कपड़े ना हो और उन्हें प्रतिदिन के भोजन की आवश्यकता हो, और तुम में से कोई उनसे कहे ‘कुशल से चले जाओ, गरम और तृप्त रहो,’ और उन्हें वह वस्तु न दे जो उनके शरीर के लिए आवश्यक है तो क्या लाभ?” (याकूब 2:14-16)।

यह किस प्रकार की साक्षी है यदि हम लोगों से केवल गरम और तृप्त होने को कहें? वह खोखली साक्षी है। अनुच्छेद 18 के खण्डन में कहा गया है: “हम इस बात का खण्डन करते हैं कि सुसमाचार की घोषणा से हटकर व्यक्तिगत गवाही, भक्तिपूर्ण जीवन, और हमारे पड़ोसियों के प्रति दया और परोपकार के कार्यों की साक्षी सुसमाचार प्रचार का निर्माण करती है।” मुझे लगता है कि हममें से अधिकांश लोग यह देख सकते हैं कि कैसे हमारे जीवन का कोरा उदाहरण सुसमाचार प्रचार नहीं है। कलीसिया को भोजन और कपड़े, राहत और रोजगार और परोपकार और दया के अन्य कार्यों के रूप में लोगों की सांसारिक आवश्यकताओं को पूरा करने में लगाना चाहिए, परन्तु सुसमाचार

सुसमाचार क्या है?

की विषय-वस्तु किसी को केवल एक रोटी या एक कप ठण्डा पानी देने से संचारित नहीं होती है। प्राप्तकर्ता अभी भी सुसमाचार नहीं जानता है।

अनुच्छेद 18 के खण्डन में उल्लिखित दूसरी प्रकार की साक्षी व्यक्तिगत गवाही देना है, जो लोगों के विश्वास में आने और उनके मसीही बनने के परिणामस्वरूप उनके साथ क्या हुआ, इसकी कहानी है। यह परमेश्वर की बातों को लोगों तक पहुँचाने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, और व्यक्तिगत गवाही का बहुत महत्व है। परन्तु व्यक्तिगत गवाही सुसमाचार नहीं है। परमेश्वर ने यह प्रतिज्ञा नहीं की है कि हमारी व्यक्तिगत गवाही उसके पास व्यर्थ नहीं लौटेगी। परमेश्वर ने हमारी व्यक्तिगत गवाही की शक्ति को उस साधन के रूप में नहीं चुना है जिसके द्वारा वह संसार का उद्धार करेगा। हमारी व्यक्तिगत गवाही अप्रत्यक्ष रूप से ख्रीष्ट के विषय में बात करती है, परन्तु विशेष रूप से हमारे और हमारी विशेष स्थिति के विषय में बात करती है, और यह जिसके साथ भी हम संवाद कर रहे हैं उसके लिए प्रासंगिक हो भी सकती है और नहीं भी। परन्तु सुसमाचार हर किसी के लिए प्रासंगिक है। सुसमाचार वस्तुनिष्ठ, अकाव्य सत्य है, और इसी की हमें घोषणा करनी है।

जिस प्रलेख का हम परीक्षण/अध्ययन कर रहे हैं, “यीशु ख्रीष्ट का सुसमाचार: सुसमाचारवादी उत्सव” इस कथन के साथ समाप्त होता है:

सुसमाचार में संगठित हुए सुसमाचारवादियों के रूप में, हम एक-दूसरे की रखवाली करने और देखभाल करने, एक-दूसरे के लिए प्रार्थना करने

सुसमाचार की उद्घोषणा

और क्षमा करने, और प्रत्येक स्थान पर परमेश्वर के लोगों तक प्रेम और सच्चाई के साथ पहुँचने की प्रतिज्ञा करते हैं, क्योंकि हम एक परिवार हैं, जो पवित्र आत्मा में और ख्रीष्ट में एक हैं।

शताब्दियों पहले, यह सत्य कहा गया था कि आवश्यक बातों में एकता होनी चाहिए, और आवश्यक से कम बातों में स्वतन्त्रता होनी चाहिए, और सभी बातों में प्रेम होना चाहिए। हम इन सभी सुसमाचार सत्यों को आवश्यक मानते हैं।

इस समापन के समर्पण का मर्म यह है: यद्यपि इस प्रलेख की रचना करने में विभिन्न प्रकार के विश्वासों और सम्प्रदायों के लोग सम्मिलित थे, और यद्यपि उन्होंने माना कि ईश्वरविज्ञानीय विषय अभी भी हमें विभिन्न बिन्दुओं पर विभाजित कर सकते हैं, वे सुसमाचार के द्वारा एकता में बाँधे गए थे। यह वह आवश्यक बिन्दु है जिस पर मसीही लोग संगति में एक हो सकते हैं। क्योंकि सच्चा सुसमाचार ही है जैसा हमें परमेश्वर के पवित्र वचन में और केवल सुसमाचार में दिया गया है, जो उद्धार देता है।

लेखक के विषय में

डॉ. आर.सी. स्मोल लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ के संस्थापक, सेंट एंड्रयूज़ चैपल, सैनफोर्ड, फ्लोरिडा के संस्थापक पास्टर, और रिफॉर्मेशन बाइबल कॉलेज के प्रथम अध्यक्ष, और टेबलटॉक पत्रिका के कार्यकारी सम्पादक थे। उनका रेडियो कार्यक्रम *रिन्यूइंग योर माइंड* अभी भी संसार भर के सैकड़ों रेडियो स्टेशनों पर प्रतिदिन प्रसारित किया जाता है और ऑनलाइन भी सुना जा सकता है। वे एक सौ से अधिक पुस्तकों के लेखक थे, जिनमें *द होलीनेस ऑफ गॉड*, *चोज़ेन बाय गॉड* और *सभी हैं ईश्वरविज्ञानी* सम्मिलित हैं। उन्हें संसार भर में पवित्रशास्त्र की अचूकता की सुस्पष्ट रक्षा तथा परमेश्वर के लोगों के लिए उसके वचन पर दृढ़ विश्वास के साथ खड़े होने की आवश्यकता के लिए पहचाना गया था।



लिग्निएर लाइब्रेरी

लिग्निएर मिनिस्ट्रीज़ एक अन्तरराष्ट्रीय मसीही शिष्यता संस्था है जिसको डॉ आर.सी. स्मोल ने 1971 में संस्थापित किया था जिससे कि जितने अधिक लोगों तक सम्भव हो सके उन तक परमेश्वर की पवित्रता को उसकी पूर्णता में उद्घोषित करें, शिक्षा दें और रक्षा करें। लिग्निएर लाइब्रेरी की मोहर सम्पूर्ण विश्व तथा कई भाषाओं में विश्वसनीयता का चिह्न बन गयी है।

महान आदेश द्वारा प्रेरित होकर, लिग्निएर, शिष्यता के संसाधन को छपे हुए तथा डिजिटल माध्यम से बाँटता है। विश्वसनीय पुस्तक, लेख और वीडियो शिक्षा श्रृंखला चालीस से अधिक भाषाओं में अनुवादित या रिकॉर्ड किए जा रहे हैं। हमारी अभिलाषा है यीशु ख्रीष्ट की कलीसिया का समर्थन करें मसीहियों की यह जानने में सहायता करने के द्वारा कि वे क्या विश्वास करते हैं, वे क्यों विश्वास करते हैं, उन्हें उसके अनुसार कैसे जीना चाहिए, और उसे कैसे बाँटना चाहिए।

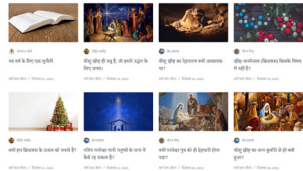


मार्ग सत्य जीवन

ऑडियो-वीडियो: भारत में कलीसिया की उन्नति के लिए हिन्दी में प्रचार एवं लेखों की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग उपलब्ध हैं। इसका उद्देश्य है कि विश्वासी तथा कलीसियाएँ सुसमाचार एवं वचन की समझ में बढ़ें और विश्वास में परिपक्व हो सकें। आप इन्हें यूट्यूब [youtube.com/@MargSatyaJeevan](https://www.youtube.com/@MargSatyaJeevan) पर देख व सुन सकते हैं।

बाइबलीय लेख: margsatyajeevan.com/articles/ पर हिन्दी में खरी शिक्षा पर आधारित लेख उपलब्ध हैं। ये लेख वचन की मुख्य शिक्षाओं को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करते हैं जिससे कि एक नया विश्वासी भी खरी शिक्षा के ज्ञान में वृद्धि करे और पवित्रता का जीवन जिए।

बाइबलीय पुस्तकें: हिन्दी में विश्वासयोग्य बाइबलीय पुस्तकों का अभाव होने के कारण, आपके लिए वचन पर आधारित पुस्तकों को उपलब्ध कराया गया है। आप margsatyajeevan.com/books/ पर कुछ योगदान देने के द्वारा पुस्तकों को प्राप्त कर सकते हैं। हमारी आशा है कि इनके द्वारा आप परमेश्वर के गुणों को देखेंगे, कलीसिया के महत्व को समझेंगे और ख्रीष्ट की समानता में बढ़ेंगे।



अधिक जानकारी के लिए:

फोन नम्बर: 9696110134

<https://margsatyajeevan.com>

ई-मेल: enquirymsj@gmail.com

यूट्यूब: [Marg Satya Jeevan](https://www.youtube.com/@MargSatyaJeevan)

ईस्टाग्राम: [margsatyajeevan](https://www.instagram.com/margsatyajeevan)

facebook.com/margsatyajeevann



सत्य वचन सेमिनरी

पास्टरीय सेवकाई के लिए प्रशिक्षण

वर्तमान समय में वचन पर आधारित कलीसियाओं की बड़ी आवश्यकता है, और कलीसियाएँ वचन पर आधारित तब होंगी जब उनके अगुवे बाइबल के अनुसार योग्य तथा उपयुक्त रीति से प्रशिक्षित होंगे। सत्य वचन सेमिनरी इस उद्देश्य के लिए अस्तित्व में है कि पुरुषों को बाइबल के ज्ञान में, स्थानीय कलीसिया की समझ में, व्यावहारिक सेवा के अनुभव में, और ख्रीष्टीय चरित्र में बढ़ाने के द्वारा कलीसियाओं की सहायता करे। यह तीन वर्षीय, आवासीय कार्यक्रम है जिसमें एम.डिव (M.Div) स्तर की पढ़ाई होती है।

सेमिनरी की कुछ विशेषताएँ:

- स्थानीय कलीसिया द्वारा संचालन
- कलीसिया के पास्टर्स द्वारा निर्देशन
- स्थानीय भाषाओं में सेवा का प्रोत्साहन
- योग्यता-प्राप्त प्रोफेसर्स द्वारा शिक्षण
- व्यावहारिक सेवकाई करने के अवसर
- सम्मेलनों/प्रशिक्षणों में जाने के अवसर
- ईश्वरविज्ञानीय पुस्तकालय की उपलब्धता

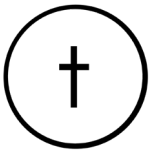
- विधिवत् ईश्वरविज्ञान
- बाइबलीय ईश्वरविज्ञान
- व्याख्याशास्त्र एवं उपदेश कला
- नए नियम में पुराने नियम का उपयोग
- विभिन्न बाइबलीय पुस्तकों का अर्थनिरूपण
- कलीसियाई इतिहास
- बाइबलीय परामर्श
- आपत्तिखण्डनशास्त्र
- अन्य धर्मों का अध्ययन
- बाइबलीय मूल भाषाओं (यूनानी एवं इब्रानी) का अध्ययन

पाठ्यक्रम के कुछ विषय:

- पुराने नियम का सर्वेक्षण
- नए नियम का सर्वेक्षण

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें +91 9450810781

आवेदन प्रपत्र भरने के लिए www.svsem.org वेबसाइट पर जाएँ।



सत्य वचन चर्च

पास्टरीय प्रशिक्षुता (इन्टर्नशिप)

परमेश्वर के वचन के अनुरूप पास्टरों की तैयारी के लिए, बाइबल के अध्ययन के साथ-साथ, व्यावहारिक सेवकाई में अनुभव तथा अनुभवी पास्टरों द्वारा शिष्योन्नति की आवश्यकता होती है। भावी पास्टरों में निवेश करने हेतु सत्य वचन चर्च का पास्टरीय प्रशिक्षुता कार्यक्रम पुरुषों को अवसर प्रदान करता है कि वे सत्य वचन चर्च के अगुवों की देख-रेख में स्वयं को सेवकाई के लिए तैयार कर सकते हैं। प्रशिक्षु सत्य वचन चर्च के सदस्य बनते हैं, कलीसिया के अगुवों के साथ समय व्यतीत करते हैं, पुस्तकों को पढ़ते हैं, और विभिन्न प्रशिक्षणों में भाग लेते हैं।

प्रशिक्षुता की विशेषताएँ:

- वचन के ज्ञान में बढ़ना।
- पास्टरीय सेवा को निकटता से देखना।
- कलीसिया के जीवन में सम्मिलित होना।
- स्थानीय कलीसिया के महत्व को समझना।
- कलीसियाई सेवकाई के सौभाग्यों तथा चुनौतियों को निकटता से देखना।
- व्यावहारिक सेवकाई के अवसर।
- सेवकाई में पासबानों द्वारा निर्देशन।
- उत्साहवर्धक एवं सुधारात्मक टिप्पणियाँ प्राप्त करना।
- सम्मेलनों में भाग लेने के अवसर।
- भविष्य की सेवा से सम्बन्धित सम्मति प्राप्त करना।
- सम्भवतः कलीसिया द्वारा पुष्टि प्राप्त करके सेवकाई के लिए भेजा जाना।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

+91 86043 09392



आवासीय शिष्यता-कार्यक्रम

आवासीय शिष्यता- कार्यक्रम सत्य वचन चर्च की एक सेवा है जिसके द्वारा भविष्य में कलीसिया के स्वास्थ्य के लिए वर्तमान में जवान भाइयों में निवेश किया जाता है। इसका उद्देश्य है कि जवान भाई 3-4 वर्षों के लिए चर्च के साथ रहकर अपनी पढ़ाई के साथ-साथ वचन के ज्ञान और परिपक्वता में बढ़ें।



कौन भाग ले सकता है? यह कार्यक्रम जवान ख्रीष्टीय पुरुषों के लिए है जो बारहवीं की पढ़ाई कर चुके हैं, स्नातक की पढ़ाई करना चाहते हैं, तथा जिनका परिवार और कलीसिया उनके इस कार्यक्रम में भाग लेने के समर्थन में हैं।

लक्ष्य: आशा है कि इस कार्यक्रम के द्वारा भाई:

- i. परमेश्वर के वचन के ज्ञान और ख्रीष्टीय परिपक्वता में बढ़ेंगे।
- ii. ख्रीष्टीय अगुवाई तथा कलीसियाई सेवकाई के लिए उत्साहित होंगे।
- iii. अपनी स्नातक की पढ़ाई पूरी करेंगे।
- iv. व्यावहारिक प्रतिभाओं तथा योग्यताओं में बढ़ेंगे। (अंग्रेजी बोलना, कम्प्यूटर चलाना, गाड़ी चलाना)
- v. व्यक्तित्व विकास तथा बौद्धिक विकास में उन्नति करेंगे।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

+91 8604309392/ +91 9696110134

क्या आप अच्छे समाचार पर विश्वास करते हैं?

बहुत लोग सोचते हैं कि क्योंकि परमेश्वर भला है, जब तक कि हम भले जीवन जिउँ, वह हमें अवश्य ग्रहण करेगा। परन्तु यह अच्छा समाचार नहीं है, क्योंकि हम में से कोई भी परमेश्वर जितना भला नहीं है। यदि हमें स्वयं के भरोसे छोड़ दिया जाता, हमें वह प्राप्त होता जिसके हम वास्तव में योग्य हैं: उसका न्याय।

इस पुस्तिका में, डॉ. आर.सी. स्मोल सुसमाचार को, जो हमारे जैसे पापी लोगों के लिए परमेश्वर का अच्छा समाचार है, समझाते हैं। जबकि हम कभी भी परमेश्वर से न्यायोचित दण्ड प्राप्त करने से स्वयं को नहीं बचा सकते हैं, परमेश्वर हमें बुलाता है कि हम उसके पुत्र, यीशु ख्रीष्ट पर भरोसा करें, जो हमें अपने धर्मी जीवन, प्रायश्चित्तकारी मृत्यु, और विजयी पुनरुत्थान के द्वारा हमें छुड़ा सकता है।

डॉ. आर.सी. स्मोल द्वारा लिखी गई यह अति महत्वपूर्ण प्रश्न पुस्तिका श्रृंखला, मसीहियों और विचारशील जिज्ञासुओं द्वारा प्रायः पूछे जाने वाले महत्वपूर्ण प्रश्नों के लिए संक्षिप्त उत्तर प्रस्तुत करती है।

डॉ. आर.सी. स्मोल लिग्निअर मिनिस्ट्रीज़ के संस्थापक थे, सेंट एंड्रयूज़ चैपल, सैनफोर्ड फ्लोरिडा के संस्थापक पास्टर, और रिफॉर्मेशन बाइबल कॉलेज के प्रथम अध्यक्ष थे। वे सौ से अधिक पुस्तकों के लेखक थे, जिनमें *द होलीनेस ऑफ गॉड* भी सम्मिलित है।



लिग्निअर
लाइब्रेरी



ISBN: 9788196962784



9 788196 962784